झूठा-सच और देश विभाजन

(एम० फिल० उपाधि के लिए प्रस्तुत लघु शोध प्रबन्ध)

निर्देशक
डॉ० पुरूषोत्तम अग्रवाल

शोधकर्त्ता
रमेश चन्द मीणा

भारतीय भाषा केन्द्र
भाषा संस्थान
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली–110067
1993

जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय
JAWAHARLAL NEHRU UNIVERSITY
NEW DELHI - 110067

दिनांक : 29.6.93

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्री रमेश चन्द मीणा द्वारा प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध "झूठा-सच और देश विभाजन" में प्रयुक्त सामग्री का इस विश्वविद्यालय अथवा अन्य किसी विश्वविद्यालय में इसके पूर्व किसी भी प्रदेय उपाधि के लिए उपयोग नहीं किया गया है । यह सर्वथा मौलिक है ।

(केदारनाथ सिंह)
अध्यक्ष
भारतीय भाषा केन्द्र
भाषा संस्थान

(पुरुषोत्तम अग्रवाल)
निर्देशक
भारतीय भाषा केन्द
भाषा संस्थान

GRAM : JAYENU TEL. : 667676, 667557 TELEX : 031-73167 JNU IN

भूमिका

भूमिका

यशपाल के साहित्य पर अब तक कई दृष्टियों से कार्य हुआ है। झूठा-सच देश विभाजन पर लिखी महत्वपूर्ण कृति होने पर भी इस विषय को लेकर अब तक कोई कार्य नहीं हुआ है। अन्य कृतियों के साथ झूठा-सच का संयुक्त रूप से सुभाष चन्द्र यादव ने "देश विभाजन और हिन्दी उपन्यास" शीर्षक से शोध प्रबंध (1981) लिखा है। इसके बावजूद कृति का महत्व देखते हुए पृथक रूप से कार्य होना आवश्यक था। आज से करीब तीन-चार वर्ष पूर्व "झूठा-सच" को पढ़ते हुए मुझे देश की सबसे बड़ी त्रासदी का अनुभव हुआ। इसी रूचि ने मुझे कृति पर कार्य करने के लिए प्रेरित किया।

प्रथम अध्याय में साम्प्रदायिकता के उद्भव से लेकर विभाजन होने तक की पृष्ठभूमि है। इस में दो बातें विशेष रूप से देखी गई हैं - पहली है - आज जिस साम्प्रदायिकता को हम देखते हैं इसके तत्व - भारतीय समाज व्यवस्था में मौजूद है। हिन्दू और इस्लाम दोनों सम्प्रदाय के लोगों का धार्मिक सांस्कृतिक परम्परा और विश्वास में भिन्नता अलगाव के कारण रहे हैं। यह अलगाव साम्राज्यवादियों के हाथों में पड़कर वर्तमान रूप ग्रहण करता है। दूसरी बात है - विभाजन के तत्कालीन कारण - जिसमें साम्राज्यवादियों की साम्प्रदायिक व महत्वाकांक्षी नेताओं की धूर्ततापूर्ण नीतियां रही हैं।

द्वितीय अध्याय में देश विभाजन के सन्दर्भ में झूठा-सच का वस्तुपरक विश्लेषण किया गया है। तृतीय अध्याय में आलोचकों की दृष्टि में झूठा-सच की समीक्षा की जांच पड़ताल करने की कोशिश की है। अंतिम अध्याय यानी उपसंहार में उपरोक्त अध्यायों का निष्कर्ष है। जिसमें आलोचकों के पूर्वग्रह,

कृति की सीमा एवं महत्व है ।

लघु शोध सम्पन्न होने की प्रक्रिया में उन सब महानुभावों को धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ जिनका सहयोग प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त हुआ है । सहपाठी अनूप शुक्ल से विषय सुझाव एवं वरिष्ठ छात्र दुर्गा प्रसाद सिंह से इस दौरान बराबर सलाह मिली है । दोनों का आभार व्यक्त करता हूँ । शोध निर्देशक अग्रवाल साहब के सहयोग एवं सलाह के लिए तहे दिल से शुक्रगुजार हूँ; जिससे यह कार्य भली-भांति सम्पन्न हो सका है ।

Rmeena

जून 1993

-रमेश चन्द मीणा

विषय सूची

विषय-सूची

पहला अध्याय

देश विभाजन की पृष्ठभूमि — 1 - 45

(क) अलगाव के बीज इतिहास में

(ख) साम्प्रदायिकता का उद्भव और विकास

(ग) विभाजन के तात्कालिक कारण

(घ) क्या विभाजन आवश्यक था

दूसरा अध्याय

झूठा सच और देश विभाजन — 46 - 109

(क) झूठा सच में साम्प्रदायिकता

(ख) राजनीतिक पार्टियां और विभाजन

(ग) विभाजन का आर्थिक पहलू

(घ) जनता की दृष्टि में विभाजन

(ङ) स्त्री त्रासदी और देश विभाजन

(च) दंगे और विभाजन

(छ) शरणार्थी समस्या और देश का भविष्य

तीसरा अध्याय

झूठा सच और आलोचक — 110- 128

उपसंहार — 129 - 134

संदर्भ- ग्रंथ सूची — 135 - 138

पहला अध्याय

देश विभाजन की पृष्ठभूमि

देश विभाजन की पृष्ठभूमि

सदियों लम्बी दर्दभरी गुलामी के बाद भारत को आजादी मिली । देशवासियों के लिए आजादी एक कड़वा सच थी । गुलामी की जंजीरों के टूटने से जितनी खुशी हुई, उससे कई गुणा अधिक विभाजन का दुःख हुआ था । अकल्पनीय साम्प्रदायिक दंगों की भयावहता ने आजादी की खुशी को राहू की भांति ग्रस लिया था । सदियों से साथ रहने वाले भिन्न-भिन्न धर्मावलम्बियों व भिन्न-भिन्न परम्पराओं वाले लोगों के सद्भाव को विभाजननेन केवल नष्ट ही किया अपितु साम्प्रदायिक दंगों ने मानवीयता की सभी सीमाओं को तोड़ दिया था ।

1. अलगाव के बीज इतिहास में

अगर हम किसी एक कारण को विभाजन के लिए बताएं तो यह हमारी भूल होगी । हालाँकि कुछ लोग जिन्ना को दोषी मानते हैं, तो कुछ कांग्रेस को और कुछ एकमात्र साम्प्रदायिकता को मानते हैं । इनमें से कोई एक कारण कदापि नहीं था । विभाजन के कारणों के लिए हमें साम्प्रदायिकता को देखना होगा । इतिहासकारों का मानना है कि साम्प्रदायिकता आधुनिक युग की देन है । इसका यह अर्थ लगाना भूल है कि पहले अलगाव जैसी बात थी ही नहीं । माना कि साम्प्रदायिक

शब्द आधुनिक है, पर अलगाव, पृथकता और धार्मिक भेदभाव हिन्दू समाज की जड़ों तक में व्याप्त हैं, तो मुसलमान धर्म में भी अलगाव के बीज कम नहीं थे । यह एक अलग बात होगी कि अलगाव के तत्व हिन्दुओं में अधिक थे या मुसलमानों में या अलगाव एक वर्ग के कारण दूसरे वर्ग में पहुंचा । इस मुद्दे पर ज्यादा बल नहीं देना है । चूंकि हिन्दू यहां के मूल निवासी रहे और मुसलमान समय-समय पर भारत में आक्रांता के रूप में आये थे । अत: हम सबसे पहले हिन्दुओं में व्याप्त विषमता, अलगाव और भेदभाव का अध्ययन करते हैं ।

वर्ण व्यवस्था में बंटा हिन्दू समाज का आधारभूत ढांचा अलगाव की जमीन पर खड़ा हुआ है । मनु की आदर्श समाज व्यवस्था चार वर्णों में बंटी हुई है । जिसमें ऊपर के दोनो-तीनों वर्ण वाले चौथे वर्ण शूद्र को हिन्दू कहलाने के सिवा कुछ नहीं देते । यह शूद्र वर्ण एक दास या गुलाम के जीवन से बदतर जीवनयापन करता था । सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक रीति-रिवाजों से अलग मान, अपमान के घूंट पीता हुआ भी वर्ण व्यवस्था के ढांचे में व्यवस्थित था, कोई विद्रोह नहीं, कोई अलग होने की चाहत नहीं और न ही कोई वैषम्य भाव था । इससे हम यह मतलब कदापि नहीं निकाल सकते कि उनके अंतर्मन में अलगाव नहीं रहा होगा - अवश्य रहा होगा । हाँ यह दूसरी बात

है कि वह अपने आक्रोश को व्यक्त नहीं कर सका था और न ही उनको ऐसा अवसर मिला था । कालांतर में यही वर्ण व्यवस्था जाति व्यवस्था में परिणत हुई ।

जाति व्यवस्था के ढांचे ने शूद्र वर्ण वालों को अनन्त निम्न एवं पिछड़ी जातियों मे परिवर्तित कर दिया । इससे अलगाव में किसी प्रकार का अंतर नहीं आया, क्योंकि शासन व्यवस्था घूम फिर कर गैर शूद्रों के पास ही रही । जिससे निम्न व पिछड़ी जातियों को शासन कार्य में किसी प्रकार की भागीदार नहीं थी । उन्हें तो सिर्फ एक चीज मिली थी दमित, शोषित और प्रताड़ित प्रजा होना । "हिन्दुस्तान में हुक्मरानों और रियाया के बीच, मध्यम वर्ग और जनता के बीच एकसानियत का लगभग पूरा अभाव है । ..... भारत की जनता अपने शासक वर्ग से पूर्ण रूप से असम्बद्ध रही, एक तरफ अपार जन समुदाय और दूसरी तरफ ऊँची जातियों का छोटा अल्पमत शासक वर्ग ।"[1]

---

1. भारत विभाजन के अपराधी - 66 - लोहिया

हिन्दू वर्ण व्यवस्था की पिछड़ी जातियों वाले तबके में धीरे-धीरे पिछड़ापन बढ़ता गया और अलगाव गहराता गया । पिछड़ी जातियों के अलावा जब विदेशी जातियों का आगमन हुआ तो उनके सामाजिक स्थान का समुचित निर्धारण हिन्दू वर्ण व्यवस्था के लिए एक समस्या थी क्योंकि तुर्क व मुसलमानों को चार वर्णों में यदि कोई स्थान दिया जा सकता है तो वह है शूद्र । शुद्ध व पवित्रतावादी वर्ण व्यवस्था ने विदेशी आक्रांताओं को म्लेच्छ अछूत व शूद्र जैसे घृणित व अपमानित नाम प्रदान किये और वर्ण व्यवस्था के मुताबिक निम्न श्रेणी में स्थान दिया । जो मुसलमान विजेता के रूप में भारत आये, वे हिन्दुओं की व्यवस्थानुसार घटिया व निम्न स्थान स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थे । जबकि उनके साथ उनकी परम्परा, धर्म और संस्कृति थी जिस पर वे गर्व कर सकते थे । फलत: जो अलगाव शूद्रों में पनप रहा था, मुसलमानों में भी घर करने लगा ।

शूद्रों वाला व्यवहार मुसलमानों के साथ किया जाने लगा । यह भाव दो धर्मों के बीच वह लकीर थी, जो दोनों समुदायों में हमेशा-हमेशा के लिए अमिट हो गई । एक अछूत मान अपमान को सह करके भी धर्म की डोरी से बंधा हुआ था पर मुसलमानों का तो अपना धर्म था, अपनी परम्परा थी और सबसे बड़ी बात तो यह है कि वे विजेता थे न कि शूद्र की तरह शोषित प्रजा मात्र । तब वे भला क्योंकर

मलेच्छ और अछूत नाम को स्वीकार करते । "अलगाव के बीज मुसलमानों को मलेच्छ और अछूत समझने के दिन से ही बो दिया गया था । हिन्दू को आप अछूत बना करके भी दबा सकते हैं क्योंकि वह आपके धर्म से बंधा नहीं है । वह अछूत समझे जाने का अपमान क्यों बर्दास्त करें ?"[1]

हिन्दू व्यवस्था सामाजिक ढाचे को छूत-अछूत, सवर्ण-अवर्ण और शासक प्रजा में विभाजित करती है । धार्मिक व सामाजिक मान्यताओं के चलते मानवीयता को नजरअंदाज कर दिया गया, जिसे अछूतों ने आस्था और विश्वास के चलते स्वीकार कर लिया था, पर मुसलमान के पास ऐसी आस्था और विश्वास गैर मुस्लिम धर्म के प्रति नहीं हो सकता था । "हिन्दू समाज के अपने अंदरूनी दोषों के कारण जाति व्यवस्था के कारण ही मुल्क दुर्बल बना है । वरिष्ठ जातियों के अहं के कारण ही हिन्दू-मुसलमान, अगले-पिछले, दलित और सवर्ण आदि समस्याओं का समाधान नहीं निकल पाया है ।"[2] हिन्दुओं का नजरिया एकांगी और एकपक्षीय रहा है ।

---

1. झूठा-सच, भाग दो - 396 - यशपाल
2. स्वतंत्रता आंदोलन की विचारधारा - 75 - मधुलिमये

"गैर हिन्दुओं के प्रति हिन्दुओं में एक प्रकार की सांस्कृतिक संकीर्णता और सामाजिक असहिष्णुता हमेशा रही है । बाहर वाले लोगों का हिन्दू समाज में प्रवेश बहुत कुछ ब्राह्मणों के सहयोग पर निर्भर था ।"[1]

अछूत व पिछड़ों से जो फायदा अब तक सवर्ण हिन्दू ही उठाते आ रहे थे, उनमें अंग्रेज भी शामिल हो गये । सभ्यता का डंका बजाने वाले अंग्रेजों ने अछूतों को साम्राज्यवादी चालों का मोहरा बना लिया । "अगर बढ़ती हुई नौकरशाही और सशस्त्र सेनाओं के दरवाजे वे अछूते जातियों के लिए खोल देते तो निश्चित रूप से उनके आर्थिक हालात काफी सुधर जाते और उसी अनुपात में उच्च जाति के लोगों की राय अंग्रेजों के खिलाफ हो जाती । अगर अछूत जातियों का भौतिक स्तर सुधर जाता तो उनके सामाजिक स्तर में सुधार को रोक पाना असंभव होता । इसलिए यह जरूरी था कि इसाई बनने की प्रेरणा देने के लिए उन पर आर्थिक दबाव बना रहने दिया जाय ।"[2]

अब तक अछूत हिन्दू वर्ण व्यवस्था के तले केवल पिसते चले आ रहे थे, सवर्ण जातियों के लिए बेकाम का समुदाय था, जिसे अंग्रेजों ने कूटनीति

---

1. साम्प्रदायिकता का ऐतिहासिक संन्दर्भ - 116 - प्रभा दीक्षित
2. प्रेमचंद और अछूत समस्या - 39 - कांतिमोहन

का मोहरा बनाकर एक नाम प्रदान किया । लाला लाजपत राय की धारणा स्पष्ट थी - "नौकरशाही की हमदर्दी के लिए अछूत की खोज एकदम ताजा है । अब नौकरशाही को इस बात का एहसास हो गया कि भारत की आकांक्षाओं के विरुद्ध अछूतों को एक हथियार की तरह इस्तेमाल किया जा सकता है ।"[1] अंग्रेजों ने न केवल अछूतों को ही भेद नीति का मोहरा बनाया अपितु मुसलमानों की भिन्न संस्कृति, भिन्न धर्म और भिन्न सामाजिक आचार-विचारों के भेद को गहरा करने व अलगाव को बढाने का पूरा अवसर प्रदान किया । इसी अलगाव के सहारे अंग्रेजों की साम्प्रदायिक भेदभाव की बेल उमर चढ़ती चली गयी थी ।

हिन्दू धर्म व संस्कारों में अलगाव था । इसका आशय यह नहीं है कि अलगाव केवल हिन्दुओं ने ही बढ़ाया है, अपितु मुसलमानों के यहां भी ऐसे तत्व पर्याप्त हैं जिनके चलते अलगाव को बढावा मिला ।

एक ही अल्लाह को मानने वाला इस्लाम गैर मुसलमानों को काफिर समझता है । धार्मिक कट्टरता और विजेता होने का दम्भ उसे समझौतावाद की तरफ बढ़ने से रोकते हैं । अपने धर्म को सर्वोच्च मानकर

---

1. प्रेमचन्द और समस्या - 83 - कांति मोहन

विस्तार करता है । अपने धर्म में अति आस्था दूसरे धर्म में यदि श्रद्धा नहीं बढ़ाती या आदर का भाव पैदा नहीं करती है तो स्वाभाविक है कि अन्य धर्म की विरोधी होगी ।

मध्य कालीन मुल्लाओं ने सजातीय शासकों को अपने अनुरूप उदारता का बरताव करने के लिए प्रेरित किया और धर्म का विस्तार करने की सुविधाएं प्राप्त कर ली । "जो हिन्दू मुसलमान धर्म को स्वीकार नहीं करते थे उन्हें अनेक प्रकार से तंग किया जाता । मुगल काल में मुसलमान को प्रचार प्रसार की अधिक सुविधाएं भी प्राप्त थी ।"[1] गैर मुसलमानों के साथ मुल्लाओं का व्यवहार आवश्यकता से अधिक अनुदारवादी था । हिन्दुओं में सर्वोच्च जाति ब्राह्मण को अपमानित करने के लिए उन्हे दण्डित किया गया । "ब्राह्मणों को दिए जाने वाला भूमि अनुदान भी कम हो गया था, क्योंकि मुस्लिम शासकों को अपने निजी धर्माचार्यों की आवश्यकताओं को पूरा करना पड़ता था । ब्राह्मणों को अब कर देने पड़ते थे, जिनकी उन्हें पहले छूट मिली हुई थी । उन्हें पहले की भांति दरबारों में राजनीतिक सत्ता भी प्राप्त नहीं थी ।"[2]

1•भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की रूपरेखा - 147 - 57, सीताराम झा श्याम
2•भारत का इतिहास - 229 - रोमिला थापर

धार्मिक मुल्लाओं व नेताओं की पहुंच मुस्लिम समाज में गहरे तक थी । उनके धर्म प्रवचनों व राजनीतिक आदेशों का प्रभाव समाज पर पड़ता था । (1703-62) धार्मिक नेता शाहवली उल्लाह मुस्लिम नगरों पर काफिरों के आधिपत्य और मुस्लिम उच्च वर्गों के आर्थिक विनाश से बड़े दुखी थे । उन्होंने अफगान शासक को लिखा -"काफिर मराठों की शक्ति को नष्ट करना तथा असुरक्षित मुसलमानों को गैर-मुसलमानों के पंजों से निकालना अत्यन्त आवश्यक है । यदि काफिरों की शक्ति इसी प्रकार बनी रही तो मुसलमान इस्लाम भूल जाएंगे और कुछ समय बाद मुसलमान की कौम ऐसी कौम बन जाएगी जिसमें इस्लाम और कुफ्र का अंतर मिट जाएगा ।"[1]

अठारहवीं सदी में मुसलमानों के पुनरूत्थान के लिए अरब में एक आंदोलन प्रारंभ हुआ । इस बहावी आन्दोलन ने भारत के मुसलमानों को भी प्रभावित किया । मक्का की यात्रा से लौटे सईद अहमद बरेलवी ने 1820 में इस आंदोलन का सूत्रपात भारत में किया । जिसका उद्देश्य था - "इस्लाम में व्याप्त कुरीतियों को दूर करके उनका शुद्धिकरण करना और मुसलमानों में धार्मिक कट्टरता की भावना उत्पन्न करना था ।"[2] इस

---

1. साम्प्रदायिकता का ऐतिहासिक संदर्भ - 22 - प्रभा दीक्षित
2. भारत का राष्ट्रीय आंदोलन - 296 - डा. एस.एल. नागोरी

आन्दोलन ने गैर-मुसलमानों के विरुद्ध प्रचार किया और उनको शत्रु समझकर प्रचार किया । वे अन्य शासकों के शासन में रहना मुनासिब नहीं समझते थे । "जिस देश में मुसलमान शासक न हो उसमें मुहम्मद साहब के नीति वचनों का पालन नहीं कराया जा सकता । मुसलमान के लिए यह उचित और आवश्यक है कि वे संगठित हो और काफिरों से युद्ध करे ।"[1]

"मुस्लिम शासन काल में जो मुल्ला शासकों की नीतियों की और कार्यों की आलोचना करने में ही संतुष्ट थे । किंतु केन्द्र में मुस्लिम सत्ता के पतन के साथ ही उलमा की पारम्परिक भूमिका भी बदल गई । मराठा और जाट जैसी गैर मुस्लिम शक्तियों के उदय में उन्हें इस्लाम के लिए खतरा नजर आने लगा । इन लोगों ने गैर-मुस्लिम शासकों के विरुद्ध मुसलमान जनता को संगठित करने के लिए आवश्यक विचारधारा का निर्माण किया ।"[2] एक तरफ धार्मिक नेता थे तो दूसरी तरफ वे शासक थे, जो अपने हाथों से खिसकती सत्ता को देखकर हताश और परेशान थे । शक्ति से हीन शासक एकमात्र धर्म की शरण में पहुंचने के सिवा और कोई चारा नहीं समझते थे । "जिन लोगों के हाथों से सत्ता छिन रही थी उन लोगों

---

1. भारतीय मुसलमानों का राजनीतिक इतिहास - 23 - रामगोपाल
2. साम्प्रदायिकता का ऐतिहासिक संदर्भ - 21 - प्रभा दीक्षित

ने जान बूझकर अपने इस आपसी सत्ता द्वंद्व पर धर्म का रंग चढ़ा दिया ।"[1]

मुस्लिम शासन के पतने के साथ ही सामाजिक और सांस्कृतिक स्थिति में परिवर्तन आने लगा, किंतु वे गैर मुसलमान शासकों की प्रजा बनना अपनी प्रतिष्ठा के प्रतिकूल समझते थे । "मुस्लिम शासक वर्ग नए सत्ताधारी हिन्दुओं की अधीनता या समकक्षता स्वीकार करने का अनिच्छुक था । अपने भाग्य परिवर्तन को उन्होंने ईश्वरीय दण्ड के रूप में लिया । उन्होंने यह स्वीकार करने से इन्कार कर दिया कि काफिरों में भी विजय पाने और शासन करने की क्षमता है ।"[2]

अलगाव को सचेत रूप से जन्म देने वाला तबका मुसलमानों में सक्रिय था - अभिजात वर्ग । सत्ता सुख भोग चुका यह तबका अपनी स्थिति को बनाए रखने के लिए चिंतित था । इसके लिए वे अलगाव को बढ़ावा देने से नहीं चूके । "राष्ट्रवाद की तुलना में सम्प्रदायवाद मुस्लिम अभिजात वर्ग के लिए मुस्लिम समुदाय की धार्मिक सांस्कृतिक चेतना को उकसाना अनिवार्य था । अंतरों की इस आधुनिक चेतना को साम्प्रदायिक वैमनस्य में बदलने में अधिक समय नहीं लगा ।"[3]

---

1. साम्प्रदायिकता का ऐतिहासिक संदर्भ (भूमिका) - 16 - प्रभा दीक्षित
2. - वही - 19, प्रभा दीक्षित
3. - वही - भूमिका - 18 -

जातिवाद को अस्वीकार करने वाला इस्लाम हिन्दू वर्ण व्यवस्था को तोड़ने में सफल होना तो दूर रहा, स्वयं भी निम्न व उच्च जातियों में बंटने लगा । "विदेशी वंशों के परिवार - जैसे अरब, तुर्क, अफगान, तथा फारसियों के वंशज सबसे ऊँची जाति के माने गये और आगे चलकर अशरफ (प्रतिष्ठित) कहलाने लगे । इसके बाद दूसरी श्रेणी में वे मुस्लिम आते थे जिन्होंने उच्च हिन्दू वर्ग छोड़कर इस्लाम ग्रहण किया था, जैसे मुस्लिम राजपूत लोग । व्यावसायिक जातियों से दो अंतिम जातियां बनी और वे स्वच्छ तथा अस्वच्छ जातियों में विभक्त हो गयीं ।"[1] फिर भी जातीय कठोरता हिन्दुओं में अपेक्षतया अधिक थीं ।

हिन्दुओं व मुसलमानों में पृथकतावादी तत्व मौजूद थे तथा एक दूसरे में अलगाव की भावना भी कम नहीं थी । फिर भी मुसलमानों में आंतरिक अलगाव हिन्दुओं की तरह गहरा नहीं था ।

2. साम्प्रदायिकता का उद्भव और विकास

हिन्दू वर्ण व्यवस्था और मुसलमानों की धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक भिन्नता ने अलगाव व पृथकतावादी प्रवृत्ति को धीरे-धीरे बढ़ने

---

1. भारत का इतिहास - 228 - रोमिला थापर

का अवसर दिया । कालांतर से मौजूद अलगाव को अंग्रेजों की कूटनीति व भेदभावपूर्ण चालों ने साम्प्रदायिकता का चोला पहना दिया । शिक्षा व आधुनिक सोच के अभाव में दोनों सम्प्रदाय अंग्रेजों की साम्राज्यवादी चालों को समझने में असमर्थ रहे । अंग्रेजों को अपना संरक्षक समझकर वे एक दूसरे से दूर होते चले गये । अंग्रेजों की शह पाकर साम्प्रदायिकता फलने फूलने लगी और हिन्दू मुसलमानों में अलगाव बढ़ता गया ।

मध्यकालीन अलगाव उपनिवेशवाद में आकर साम्प्रदायिकता में परिणत हुआ । "भारत में साम्प्रदायिकता चेतना का जन्म उपनिवेशवाद के दबाव तथा उसके खिलाफ संघर्ष करने की जरूरतों से उत्पन्न परिवर्तनों के कारण हुआ । विभिन्न अंचलों तथा देश के बढ़ते हुए आर्थिक राजनीतिक और प्रशासनिक एकीकरण भारत को एक आधुनिक राष्ट्र बनाने की प्रक्रिया उपनिवेशवाद तथा भारतीय जनता का बढ़ता हुआ अंतर्विरोध तथा आधुनिक सामाजिक वर्गों एवं उपवर्गों का निर्माण इन तमाम कारणों से लोगों में अपने साझा हितों को देखने के नए तरीकों की जरूरत हुई ।"[1]

✓धर्म का संबंध साम्प्रदायिकता से जोड़ कर एक भ्रम हमेशा बना दिया जाता है कि धर्म ही साम्प्रदायिकता को बढाता है । किंतु ऐसा नहीं है, अपितु धार्मिक पंडितों, उलमाओं और राजनीति नेताओं द्वारा

---

1. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष - 372 - विपिन चन्द्र

स्वार्थों की पूर्ति हेतु धर्म को भुनाने के काम में लेते हैं । आस्था और विश्वास से जुड़ा धर्म बड़ा ही संवेदनशील होता है । धर्म से जुड़ा व्यक्ति धर्म का उपयोग करने वालों के स्वार्थ को नहीं समझ पाता और भावना की बलि चढ़ जाता है । "भारत में साम्प्रदायिकता की समस्या को केवल हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न या इसको हिन्दू-मुस्लिम धर्मों का विरोध मानना ठीक नहीं है । साम्प्रदायिक प्रश्न का आधार राजनैतिक अधिक और धार्मिक कम है । इन धर्मों के अतिरिक्त इस त्रिभुज में एक तीसरा पक्ष भी था अंग्रेजों ने हिन्दू और मुस्लिम सम्प्रदायों के बीच अपने आपको स्थापित कर एक साम्प्रदायिक त्रिभुज खड़ी कर दी है ।"[1]

निस्वार्थ भाव से धार्मिक आस्था व विश्वास रखने वालों का धर्म और साम्प्रदायिक रंग देने वालों का धर्म भिन्न होता है । "भारत में साम्प्रदायिकता के विकास में धर्म की कोई बुनियादी भूमिका नहीं थी । धर्म के दो रूप हैं - निष्ठाओं की वह पद्धति जिनके अनुसार व्यक्ति अपने जीवन का संचालन करता है और दूसरा रूप है धर्म पर आधारित सामाजिक राजनीतिक पहचान की विचारधारा यानी साम्प्रदायिकता । दूसरे शब्दों में धर्म साम्प्रदायिकता का कारण नही बनता, हालांकि सभी तरह के

---

1. आधुनिक भारतीय इतिहास -575 - ग्रोवर बी॰एल॰ यशपाल

साम्प्रदायिकतावादी धार्मिक मतभेदों का इस्तेमाल करते हैं ।"[1]

साम्प्रदायिकता का कारणीभूत पहलू सत्ता संघर्ष था, इसी संघर्ष के कारण धर्म का इस्तेमाल कई प्रकार से किया जाता रहा है । "भारतीय इतिहास की गहराई में जाने से यह स्पष्ट हो जाता है कि साम्प्रदायवाद का मूल तत्व सत्ता के द्वंद्व में था, धर्म में नहीं । सम्प्रदायवाद लोकतंत्रीय राष्ट्रवाद के विरूद्ध स्थापित अभिजात वर्ग की राजनीतिक प्रतिक्रिया थी, एक समुदाय की धार्मिक भावना की राजनीतिक अभिव्यक्ति नहीं ।"[2]

साम्प्रदायिकता के पीछे आर्थिक तत्व की भूमिका भी थी, जिसे नजर अंदाज नहीं किया जा सकता । समाज में व्याप्त विषमता, व विषमता से पनपता आक्रोश साम्प्रदायिक रूप में यदि सामने आता है तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है । अमीरी-गरीबी की चौड़ी होती खाई साम्प्रदायिक दंगों में बदल रही थी । "इसकी सामाजिक जड़ों तथा इसके सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक लक्ष्यों को भारतीय इतिहास के आधुनिक काल में खोजा जा सकता

---

1. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष - 383 - विपिन चंन्द्र
2. साम्प्रदायिकता का ऐतिहासिक संदर्भ - भूमिका - 19, प्रभा दीक्षित

है । समकालीन सामाजिक आर्थिक ढाँचे ने न केवल इसे पैदा किया अपितु पुष्पित-पल्लवित भी किया ।"[1] भेदभाव इस रूप में कम नहीं हुआ कि जिसे नजर अंदाज किया जा सके । "सामाजिक और धार्मिक मतभेदों के अलावा एक और भेद ऐसा था, जिसकी अग्रता किसी रूप में कम नहीं आंकी जा सकती यह भेद था आर्थिक ।"[2]

सामाजिक विषमता आक्रोश को जन्म देती है, उसी तरह आर्थिक वैषम्य और भिन्नता, आक्रोश, द्वेष और साम्प्रदायिकता को भी जन्म देता है । "पंजाब सिंध और बंगाल, में हिन्दू लोग सब तरह से ज्यादा मालदार साहूकार और शहरी थे । इन प्रान्तों के मुसलमान गरीब कर्जदार और देहाती थे । इसलिए इन दोनों की टक्करे अक्सर आर्थिक होती थी पर उसको हमेशा साम्प्रदायिक रंग दे दिया जाता था ।"[3]

बाढ़, भूखमरी, अकाल और बढ़ती हुई बेरोजगारी ने भाई-भतीजावाद और धर्म व जातीयता के आधार पर रोजगार मुहैया करवाये ।

1• भारत का स्वतंत्रता संघर्ष - 37। - विपिन चंद्रा
2• आधी रात को आजादी - 20 - कालियंस और लेंपियर
3• मेरी कहानी -650 - नेहरू

"सफलता की संभावनाएं बढ़ाने के लिए वे जाति, प्रांत और धर्म जैसी सामूहिक पहचानों का सहारा लेते थे । इस तरह साम्प्रदायिकता मध्य-वर्ग के कुछ व्यक्तियों को तात्कालिक फायदा पहुंचा सकती थी और उसने पहुंचाया भी । इससे साम्प्रदायिक राजनीति को एक तरह की वैधता भी मिली । .... उसे वे मध्य वर्ग के कुछ व्यक्तियों पर इसलिए लाद सके, क्योंकि उस वर्ग के सामाजिक आधार में इसका थोड़ा बहुत अंश पहले से मौजूद था ।"[1] आर्थिक मजबूरियों से जमकर फायदा उठाया । "किसी भी जाति के सफल नेताओं ने अनुभव किया कि सामाजिक मान्यता, नौकरियां एवं राजनीतिक लाभ प्राप्त करने के लिए उनके संकुचित एवं स्वार्थमय संघर्ष में बिरादरी के भाई-बंधुओं का समर्थन प्राप्त करना बहुत उपयोगी हो सकता है ।"[2] निश्चित ही आर्थिक वैषम्य ने निम्न समुदायों में अलगाव को गहरा किया और साम्प्रदायिक रंग को चढ़ने का अवसर प्रदान किया ।

1857 के विद्रोह से सबक लेकर अंग्रेजों ने संगठित जन समुदाय में अलगाव के भाव पैदा करने की कोशिश की । उनको लगा कि विद्रोह के

---

1. स्वतंत्रता संघर्ष - 374 - विपिन चंद्रा
2. आधुनिक भारत - 77 - सुमित सरकार

पीछे मुसलमानों की ताकत थी जो सदियों से शासन करते आये हैं। मुसलमानों का धर्म के नाम पर दमन किया और हिन्दुओं को राहत प्रदान की। हिन्दुओं की तुलना में मुसलमानों पर अधिक अविश्वास किया गया। "1893 से 1907 के मध्य केन्द्रीय विधान सभा में केवल 12प्रतिशत स्थान मुसलमानों को प्राप्त हुए थे जबकि जनसंख्या के वे 23 प्रतिशत थे। सरकारी नौकरियों में मुसलमानों की नियुक्ति के प्रश्न पर स्थिति विश्वास-जनक नहीं थी। 1904 में लार्ड कर्जन के आदेशों पर किए गए एक सर्वेक्षण में यह पाया गया कि भारत सरकार की सेवा में लगे पचहत्तर रूपये या इससे अधिक वेतन पर काम करने वाले हिन्दुओं की संख्या 1427 थी और मुसलमानों की मात्र 213, यह अनुपात सात हिन्दुओं पर एक मुसलमान का पड़ता था जबकि कुल जनसंख्या के वे एक चौथाई थे।"[1] यह भेदभाव योजनानुसार किये गए, एक समय तक एक प्रकार के समुदाय को और दूसरे समय में दूसरे सम्प्रदाय को अधिक राहत देना। "मूलत: और अनिवार्य रूप से ब्रिटिश नीति यही रही है कि हिन्दू-मुसलमान मिलकर न चलें और आपस में एक दूसरे से लड़ते रहें। सन 1857 के बाद अंग्रेजों का वार हिन्दुओं की बनिस्बत मुसलमानों पर अधिक गहरा रहा। मुसलमानों का

---

1. आधुनिक भारत का इतिहास - 475 - सं. आर.एल. शुक्ल

कुछ ही समय पूर्व हिन्दुस्तान पर राज्य था । इस बात की याद-दास्त उनमें ताजी थी । इस वजह से अंग्रेज उनको ज्यादा उग्र लड़ाकू और खतरनाक समझते थे ।"[1]

(1905 का) बंग भंग प्रशासकीय व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए विशाल क्षेत्र को दो भागों में बांटने का बहाना बनाया । जिसके पीछे मूल स्वार्थ था, राष्ट्रीय आंदोलन में धार्मिक अलगाव पैदा करके कमजोर बनाना था । "कम्युनल अवार्ड (1932) से साम्प्रदायिक अलगाव पैदा करने का बहुत बड़ा मकसद था । न केवल हिन्दू-मुसलमानों अलग किया अपितु सिख, दलितों, भारतीय ईसाइयों के लिए भी अलग-अलग चुनाव क्षेत्र घोषित कर दिये । साम्प्रदायिक चुनाव प्रणाली अपनाकर भारत के संवेदनशील मत-भेदों को छोड़कर समुदायों में अलगाव की भावना पैदा की । "अगर मुसलमान का निर्वाचन क्षेत्र अलग था, तो दूसरे लोग भी अपने लिए खास हिफाजत की मांग करते । एक बार पृथक निर्वाचन शुरू कर देने के बाद बंटवारे और हिस्से का और उससे पैदा हुई कठिनाइयों का कोई खात्मा ही नहीं था ।"[2]

---

1. मेरी कहानी - 641 - नेहरू
2. हिन्दुस्तान की कहानी - 525 - नेहरू

अंग्रेजों ने प्रेस को उपनिवेशवादी प्रचार का साधन बनाया । "पत्र-पत्रिकाओं, परचों, पुस्तिकाओं, किताबों, सार्वजनिक मंचों और अफवाहों के जरिए जो साम्प्रदायिक घृणा फैलाई जा रही थी, उसके खिलाफ सरकार ने कोई कार्रवाई नहीं की, जबकि राष्ट्रीयतावादी पत्र-पत्रिकाओं, साहित्य प्रचार आदि का तेजी से दमन किया गया । और तो और, सरकार ने साम्प्रदायिक नेताओं, बुद्धिजीवियों और सरकारी कर्मचारियों को तरह-तरह की उपाधियों, लाभ के पदों, ऊंची तनख्वाह आदि से विभूषित किया ।"[1]

अंग्रेजों ने भारतीय समाज की संवेदनशीलता को गहराई तक पहचाना और उन्होंने फूट और अलगाव के बीजों को बोया । "भारतीय समाज में जो भी विभाजन मौजूद थे, उन्हें इसलिए प्रोत्साहित किया गया, ताकि राष्ट्रीय एकता के उदय को रोका जा सके । एक अंचल को दूसरे अंचल के खिलाफ, लड़ाकुओं को नरम पंथियों के खिलाफ, वाम पंथियों को दक्षिण पंथियों के खिलाफ और यहां तक कि एक वर्ग को दूसरे वर्ग के खिलाफ भिड़ा देने की कोशिश की गई । लेकिन अंत तक टिका साम्प्रदायिक विभाजन ही और वही सबसे ज्यादा कारगर भी हुआ ।"[2] अंग्रेजों ने साम्प्रदायिक

---

1. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष - 380 - विपिन चंद्रा
2. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष - 378 - विपिन चंद्रा

तत्वों को सर उठाने का पूरा अवसर ही नहीं दिया अपितु वे बढ़ावा भी दे रहे थे ।

इतिहासकार की विचारधारा का प्रभाव इतिहास पर भी पड़ता है । हिन्दू व मुस्लिम लेखकों ने इतिहास की रचना व व्याख्या अपने धर्म से प्रेरित होकर की तो दूसरी तरफ ब्रिटिश इतिहासकार जेम्स मिल ने भारतीय इतिहास के प्राचीन काल को हिन्दू-युग और मध्य काल को मुस्लिम युग की संज्ञा दी । "भारतीय इतिहास खास तौर से प्राचीन और मध्य-युगीन भारतीय इतिहास की साम्प्रदायिक तथा अवैज्ञानिक, विकृत व्याख्या साम्प्रदायिक चेतना के फैलाव का एक मुख्य औजार बनी । साम्प्रदायिक विचारधारा का यह एक बुनियादी अंग भी था । स्कूल-कालेजों में भारतीय इतिहास बुनियादी रूप से साम्प्रदायिक दृष्टि से ही पढ़ाया जा रहा था और इससे साम्प्रदायिकता के उदय और विकास में भारी सहायता मिली ।"[1] इसका प्रभाव अंध-धर्मावलम्बियों पर तो पड़ा ही साथ में राष्ट्रवादियों नें भी अचेतन मन से स्वीकार किया । गांधी जी ने लिखा "हमारे देश में साम्प्रदायिक सौहार्द तब तक स्थायी रूप से नहीं लाया जा सकता जब तक हमारे स्कूल-कालेजों में इतिहास को पाठ्य पुस्तकों के जरिए इतिहास की

---

1. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष - 381 - विपिन चंद्र

TH- 4629
0,152 ,3,N03,2:9
(V,44 N47)
152 N3

बेहद विकृत व्याख्याएं पढ़ाई जाती रहेंगी ।"[1]

साम्प्रदायिकतावादियों पर यह सिद्धांत हावी होता जा रहा था कि झूठ जितना बड़ा हो, उतना ही ज्यादा काम करेगा । ऐसा उनको अपने अस्तित्व को बचाने के लिए करना पड़ा । यदि वे ऐसा नहीं करते तो राजनीति में उन्हें जगह नहीं मिल पाती । साम्राज्यवादियों ने दोनों धर्म वालों को जन्म घूंटी की तरह "साम्प्रदायिकतावादियों ने इस साम्राज्य-वादी प्रचार को भी जल्दी ही अंगीकार कर लिया कि मध्य युग के शासक हिन्दू विरोधी थे, हिन्दुओं पर जुल्म करते थे और उन्हें जबरदस्ती मुसलमान बनाते थे । ..... मध्य काल के मुसलमान शासकों को उनके धर्म के कारण विदेशी भी घोषित कर दियागया ।"[2]

जब हिन्दू प्राचीन काल को स्वर्ण युग कहने लगे तो प्रतिक्रिया स्वरूप मुसलमान भी पीछे नहीं थे । "उन्होंने पश्चिमी एशिया में इस्लामी उपलब्धियों के स्वर्णयुग का राग अलापना शुरू किया और उसके नायकों, मिथकों तथा सांस्कृतिक परम्पराओं के गीत गाने लगे । ... वे सभी

---

1. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष - 381 - विपिन चंद्र
2. - वही - - 382 -

मुसलमान शासकों को यहां तक की औरंगजेब जैसे मदांध राजाओं की भी, महिमा-मण्डित करने की कोशिश करते थे ।"[1] जिसको हिन्दू अंधकार काल कहकर अपना आक्रोश व्यक्त करते हैं ।

✓ हिन्दुओं के उग्र संगठन - राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ एवं हिन्दू महासभा वाले अल्प संख्यक मुसलमानों को धमकी देकर भयभीत कर रहे थे तो दूसरी तरफ आर्य समाज जहां एक ओर हिन्दू कुरीतियों पर आक्रमण कर रहा था, वहीं इस आंदोलन का एक पक्ष यह भी था जिसमें दूसरे धर्म के प्रति विशेषकर इस्लाम के प्रति असहिष्णु थे । बाल गंगाधर तिलक जैसे राष्ट्रवादी साम्प्रदायिक नहीं थे, पर उनके प्रतीक शिवाजी, गणेश पूजन व उनके नारे दूसरे धर्मावलम्बियों तक पहुंच कर अर्थ बदल लेते थे । शिवाजी के कारनामों का अतिरंजित रूप प्रस्तुत करना और औरंगजेब को विदेशी आक्रांता कहना मुसलमानों की भावनाओं पर कुठाराघात था ।

हिन्दू साम्प्रदायिकता का ज्वलंत रूप राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ था । "इसको विस्तृत और संगठित करने में डा॰ हेडगेवार का योगदान है, तो इसको देश के कोने-कोने में एक श्रेणीबद्ध संगठन के रूप में लोकप्रिय बनाने का श्रेय एस॰एल॰ गोलवलकर को था जो 1940 में सर संघ चालक बने ।

1॰ भारत का स्वतंत्रता संघर्ष - 382 - विपिन चंद्र

गोलवलकर ने अपनी पुस्तक "वी" {हम} में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ का राजनैतिक दर्शन स्पष्ट किया है, जिसमें फासीवाद के सिद्धांतों की स्पष्ट प्रतिध्वनि है ।"[1] सावरकर हिन्दू महासभा के मंच से आग उगल रहे थे और उन्हीं शब्दों में जिन शब्दों में जिन्ना बोलता था । "हिन्दुस्तान एकरस राष्ट्र नहीं माना जा सकता है, बल्कि उसमें दो राष्ट्र हैं । मुख्यत: दो हैं, एक है हिंदू और दूसरा है मुसलमान ।"[2] इस तरह हिन्दू धर्म हिन्दू महासभा और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ जैसे संगठनों के चलते साम्प्रदायिकता का मोहरा बन चुका था ।

विभाजन के तात्कालिक कारण

मुस्लिम साम्प्रदायिकता अंग्रेजों की कूटनीति और दबाव का परिणाम तो थी ही, साथ में हिन्दुओं के साम्प्रदायिक संगठनों का प्रति उत्तर देने के फलस्वरूप भी थी । तिलक जैसे राष्ट्रीय नेताओं द्वारा स्वतंत्रता आंदोलन

---

1. आधुनिक भारत का इतिहास - 488,489 - आर.एल. शुक्ल
2. स्वतंत्रता आंदोलन की विचारधारा -72 - मधुलिमये

के नारों में शिवाजी का गुणगान करना मुसलमानों के लिए औरंगजेब के संदर्भ में अर्थ लगाना होता था - जो मुसलमानों की भावनाओं को ठेस पहुंचाता था । मुसलमानों को अपनी पहचान स्थापित करने के लिए एक मंच की आवश्यकता महसूस हुई तथा अंग्रेजों के साथ उचित संबंध स्थापित करके हिन्दुओं से बचाव का एक कवच के रूप में (1906) लीग का उदय हुआ । यह पूर्णत: सही नहीं है कि "मुस्लिम लीग के विकास के पीछे सबसे बड़ी बात थी कि कांग्रेस ने मुस्लिम जनता तक पहुंचने और उसे अपने साथ लाने की गंभीर और लगातार कोशिश नहीं की ।"[1] अपितु मुसलमानों में आवश्यकता से अधिक अंग्रेजों के प्रति मोह व हिन्दुओं से अनावश्यक डर था ।

साम्प्रदायिकता के विकास में कांग्रेस का हाथ भी देखा जा सकता है । तत्कालीन नेताओं ने राष्ट्रीय कांग्रेस की छवी अधिक धर्म निरपेक्ष बनाने की जल्दबाजी में अदूरदर्शी निर्णय लिये जिसका प्रभाव साम्प्रदायिक-वादियों पर गलत पड़ा या यूं कहें कि उनको मनमानी करने की एक सीमा तक छूट मिल गई । "कांग्रेस के गठन के लगभग तत्काल बाद, गौ-हत्या पर प्रस्ताव विचारार्थ रखा गया था । पर इस पर विचार नहीं किया गया ।

---

1. भारत वर्तमान और भावी -256 - रजनी पाम दत्त

यह फैसला लिया गया कि ऐसे किसी विषय पर कांग्रेस विचार नहीं करेगी जिसका हिन्दू या मुस्लिम प्रतिनिधि एकमत से या कमोवेश एकमत से विरोध करेंगे । इस फैसले में एक सम्प्रदाय-आधारित दृष्टिकोण निहित था ।"[1]

स्पष्ट रूप से साम्प्रदायिकता का चोला पहन चुके राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ और महासभा के अतिरिक्त ऐसे भी नेता थे जिनका स्वरूप सभी सम्प्रदायों में मेल-जोल पैदा करने वाला था । जिनको किसी भी दृष्टि से साम्प्रदायिक नहीं कहा जा सकता था, किंतु कभी-कभी उनके द्वारा ऐसे वक्तव्य दे दिये गये जिसका अर्थ दूसरा समुदाय कुछ और ही लगा सकता था । "खास तौर पर दक्षिण पंथी नेताओं तथा गांधी जी के प्रचार में, हिन्दू धर्म की गहरी पुट मिली रहती थी, जो मुसलमान जनता को कांग्रेस की ओर नहीं खींचती थी । ..... 1920-22 के असहयोग आन्दोलन के समय, जब वे संयुक्त आंदोलन के नेता के योग्य पद पर थे, उस समय उन्होंने ऐलान किया था कि वह "सनातनी हिन्दू है, पुनर्जन्म तथा अवतारों में विश्वास, वर्णाश्रम, गोरक्षा, और मूर्ति पूजा में अविश्वास नहीं ।"[2] ये

---

1. आज का सम्प्रदायवाद हस्तक्षेप की सार्थकता - 15 - के.एन. पाणिकर
2. भारत : वर्तमान और भावी - 257-58 - रजनी पाम दत्त

शब्द उन मुसलमानों को अवश्य दूर कर रहे थे जो, लीग और राष्ट्रवादी आंदोलन के बीच में झूल रहे थे । गांधी जी निश्चय ही राष्ट्रवादी थे, पर जब नेहरू का वक्तव्य देखते हैं, तो अर्थ और भी गहरा हो जाता है । "पीछे की तरफ चलने की इस होड़ में ..... हिन्दू महासभा को मात करने वाले सनातनी हैं जिनमें हद दर्जे के मजहबी दकियानूसीपन के साथ-साथ अंग्रेजी सरकार के प्रति बहुत तीव्र या कम से कम बहुत बुलंद आवाज में प्रकट की जाने वाली राज भक्ति भी होती है ।"[1] यहां यह सब कहने का मतलब सिर्फ इतना है, कि राष्ट्रभक्ति से ओत-प्रोत हिन्दू-मुस्लिम नेताओं के अलावा कट्टर मुस्लिम लीगी नेताओं में अलगाव के भाव पैदा करने व प्रचार करने के लिए ये शब्द पर्याप्त थे, न कि गांधी जी को साम्प्रदायिक घोषित करना है ।

मुसलमानों की साम्प्रदायिकता के पीछे कांग्रेस का अंतर्विरोधपूर्ण व्यवहार भी जिम्मेदार था । एक तरफ तो कांग्रेस मुसलमानों को विशेष रियायत दे रही थी । जैसे लखनऊ समझौता के तहत जनसंख्या से अधिक प्रतिनिधित्व प्रदान करके धर्म निरपेक्ष छवि को कांग्रेस उज्ज्वल नहीं कर सकी । "दोनों समुदायों की राजनीतिक निकटता के बाद भी अलगाव पहले की तरह कायम रहा । मुसलमानों के पृथक राजनीतिक अस्तित्व को

---

1. भारत वर्तमान और भावी, 258, रजनी पाम दत्त

मान्यता देकर कांग्रेस ने स्वयं अपनी इस घोषणा को गलत साबित कर दिया कि भारत एक राष्ट्र है ।"[1] दूसरी तरफ कांग्रेस का एक पक्षीय प्रचार था । "कांग्रेस का प्रचार भी, विशेष रूप से निचले स्तरों पर सदा धर्म-निरपेक्ष नहीं होता था; आखिरकार राम राज्य की कल्पना में मुसलमानों के लिए क्या आकर्षण हो सकता था ।"[2]

खिलाफत आन्दोलन की एकता की नींव बड़ी कमजोर थी, जिसे भारतीय आन्दोलन कर्ता समझ नहीं सके । "खिलाफत आन्दोलन के दौरान लगाए गए "हिंदू-मुस्लिम भाई-भाई" के नारे भारतीय जनता की राजनीतिक एकता का प्रतीक कदापि न थे । हिन्दू गैर मुसलमान हैं, यह तथ्य हमेशा खिलाफत आंदोलन के नेताओं के दिमाग में ताजा रहा । जिन्होंने मुसलमानों को अंतर्राष्ट्रीय एकता के लिए आवाज बुलंद की थी उनके लिए अपने विचारों की दुनिया में हिन्दुओं को स्थान देना असंभव था ।"[3]

खिलाफत आंदोलन के बाद साम्प्रदायिक दंगे अप्रत्याशित रूप से हुए । किसी आंदोलन के बाद का खालीपन कहर के रूप में सामने आया । चूंकि खिलाफत आंदोलन विदेशी अतातुर्क के आधार पर चला था यानी

---

1. साम्प्रदायिकता का ऐतिहासिक संदर्भ, 52, प्रभा दीक्षित
2. आधुनिक भारत, 271, सुमित सरकार
3. साम्प्रदायिकता का ऐतिहासिक संदर्भ, 54, प्रभा दीक्षित

भारतीय जमीन से अलग और जब आंदोलन समाप्त हुआ तो "हिन्दुस्तानी मुसलमानों के दिमाग में गदर के बाद धीरे-धीरे जो सपने जैसा ढांचा तैयार हुआ था उसे अतातुर्क ने कुछ सीमा तक मिटा दिया। फिर एक ढंग का खोखलापन पैदा हुआ। बहुत से मुसलमानों ने इस खालीपन को कौमी आंदोलन में शरीक होकर भरा।"[1] खिलाफत के खालीपन ने अप्रत्याशित ढंग से राष्ट्रवादी तत्वों को तिरोहित कर दिया था "उधर अरबों में भी धार्मिक भ्रातृभाव और इस्लामी चेतना की जगह अरब-चेतना जगने लगी लेकिन हिन्दुस्तान में धार्मिक पुनर्जागरण का साम्प्रदायिक चेतना का भूत जो एक बार जग गया था, वह अब शांत होने के लिए तैयार नहीं था।"[2] साम्प्रदायिकता के अतिरिक्त विभाजन के अन्य कारणों में - तत्कालीन परिस्थितियां, अंग्रेजों की साम्राज्यवादी नीतियां, कांग्रेस की अदूरदर्शिता और लीग की हठधर्मिता थी। जिन्होंने बंटवारे को चरम बिन्दु तक पहुंचा दिया था।

अंग्रेजों का मूल उद्देश्य था भारत को उपनिवेश बनाये रख कर ब्रिटेन के लिए कच्चे माल के रूप में प्रयोग किया जाये। इसके लिए जायज-नाजायज हथकंडे अपनाएं जाएं तो वह भी किया गया। साम्प्रदायिक नीति

---

1. हिन्दुस्तान की कहानी, 477, नेहरू
2. स्वतंत्रता आंदोलन की विचारधारा, 78, मधुलिमये

आंदोलन की एकता को खण्डित करने की .. खतरनाक चाल थी । "हिन्दुस्तान में मुस्लिम राष्ट्र, मुस्लिम-संस्कृति और हिन्दू और मुस्लिम संस्कृतियों की घोर असम्बद्धता पर खूब जोर दिया जा रहा है । इसका परिणाम लाजमी तौर से यही निकलता है कि न्याय करने और दोनों संस्कृतियों में बीच-बचाव करने के लिए हिन्दुस्तान में अंग्रेजों का अनंतकाल तक बना रहना जरूरी है ।"[1] भारत को उपनिवेश बनाये रखने की सोच लार्ड वैवल के पूर्व गवर्नरों तक ही सीमित थी । बाद में इस सोच में परिवर्तन आने लगा ।

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन बड़े स्तर पर पूरे भारत में फैल चुका था । और उसकी आंतरिक व्यवस्था इसकी इजाजत नहीं दे पा रही थी । "ब्रिटेन की सेना और जनता, दोनों युद्ध से थक चुकी थी और उसकी अर्थ-व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो चुकी थी । ऐसी स्थिति में ब्रिटेन का पीछे हटना निश्चित था ।"[2] समुचित संख्या में अंग्रेजी अफसरों व सैनिकों का अकाल हो गया । "ब्रिटेन के लोग द्वितीय विश्वयुद्ध से थक चुके थे और लंबी-लंबी अवधि तक देश से दूर रहने के कारण उनका उत्साह मंद पड़ने लगा था । ... 1945 की नौकरशाही संख्या और मनोबल, दोनों दृष्टियों से कमजोर थी

---

1. मेरी कहानी, 653, नेहरू
2. आधुनिक भारत, 467, सुमित सरकार

ओर 1942 के आंदोलन ने उसे तोड़ दिया था ।"[1]

निचले स्तर पर शांति व्यवस्था और उपद्रवियों को रोकने के लिए "प्रथम विश्वयुद्ध के समय तक आई·सी·एस· में ब्रिटिश वर्चस्व समाप्त हो चुका था । 1939 तक इस सर्वाधिक प्रतिष्ठत सेवा में ब्रिटिश और भारतीय हिस्सेदारी बराबर हो चुकी थी ।"[2] अंग्रेजों के निर्णय अंतर्विरोध पूर्ण हो गये थे । "समझौता या दमन दोनों में से करना क्या है, यह साफ हो । ····अधिकारी इस संभावना से चिंतित थे कि जिन नेताओं का उन्होंने सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान दमन किया था, अब उन्हीं का हुक्म मान कर चलना पड़ेगा ।"[3]

इन परिस्थितियों में "एकबात यह भी थी कि अंग्रेज जितना शीघ्र हो सके, भारत छोड़ने का दृढ़ निश्चय कर चुके थे, ····· अन्यथा विकल्प था भारत में भारी दमन चक्र चलाना और भारत में अनेक वर्षों तक रहना"[4] असंभव हो गया था । क्योंकि "जिलाधिकारी, जो आई·सी·एस· का

1· भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, 449, सुचेता महाजन
2· - वही - 449, सं· विपिन चंद्र
3· - वही - 450, सं· विपिन चंद्र
4· आधुनिक भारत, 499, सुमित सरकार

अंग होता था । इस स्वर्गोद्भूत-सेवा को राज के इस्पाती फ्रेम के रूप में भी याद किया जाता है । जब ये सरकारपरस्त लोग ब्रिटिश राज के जहाज से कूदने लगे, प्रतिष्ठा खाक में मिलने लगी, जिला अधिकारी और सचिवालय के लोग पतवार छोड़ने लगे तो यह साफ हो गया कि जहाज डूब रहा है और तेजी से डूब रहा है । यह वर्षों के विध्वंस का परिणाम था । जहाज न केवल अंदर से सड़ रहा था, बल्कि उस पर बाहर से अनवरत आघात हो रहा था ।"[1]

इन परिस्थितियों में ब्रिटिश सरकार को एक और भय था - "माउंट बेटन अच्छी तरह जानते थे कि दो सालों तक भारत को संभाले रहना ब्रिटिश सरकार के लिए कतई-कतई संभव नहीं होगा । साम्प्रदायिक दंगों के बारूद से दबा भारत विस्फोटों से घिर जायेगा । भारत की आंतरिकता की धज्जियां उड़ जाएगी ।"[2] इस डर से उन्होंने भारत से भागने की सोची थी, केवल का ऐसा सोचना था। माउंट बेटन भावी कत्ले आम और अमानवीय गृहयुद्ध को महसूस कर चुका था । "भारत को यदि अचानक आजाद कर दिया गया, तो वह देश जिस भयानक गृहयुद्ध की लपेटों में जलकर खाक हो जाएगा, उसके लिए सारी दुनिया इंग्लैण्ड को ही दोषी

---

1. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, 449, सुचेता महाजन
2. आधी रात को आजादी, 126, कॉलिंस और लेंपियर

ठहरायेगी । हिंसा और प्रति हिंसा की ऐसी आग भड़क उठेगी, जैसी पिछली साढ़े तीन शताब्दियों में कभी देखी क्या सोची भी नहीं गई ।"[1] मुसलमानों और हिन्दुओं के बीच साम्प्रदायिकता का जहर अंग्रेजों ने इन दोनों समुदायों की नसों तक में उतार दिया था । वैवल स्वीकार करता है कि "हमने जिस [लीग] को शक्ति प्रदान की, उस पर हमारा नियंत्रण नहीं रहा ।"[2]

भारत को आजादी देने का निर्णय अंग्रेजों ने मजबूर होकर कर लिया । वे न तो विभाजन का कलंक अपने सर पर लेना चाहते थे और न ही विभाजन से पूर्व सत्ता सौंपना चाहते थे । माउंट बेटन के शब्दों में - "हर संभव प्रयास करने के बाद विभाजन का निर्णय जनता पर छोड़ दिया अगर जनता चाहेगी तो विभाजन रूक जाएगा । मेरी इच्छा है कि अगर विभाजन करना पड़ता है, तो इसका दोष दुनियां अंग्रेजों के मत्थे न मढ़े । दुनिया के सामने स्पष्ट रहना चाहिए कि विभाजन का फैसला स्वयं भारतीयों ने किया है, न कि किसी और ने ।"[3] वे अपने को सर्वाधिक न्यायकर्ता के रूप में प्रतिष्ठित करना चाह रहे थे । वे जाते-जाते कोशिश कर रहे थे कि भारत के साथ कैसा संबंध रहेगा. । "बिना समझौते के भारत से हट जाना

---

1. आधी रात को आजादी, 5, कॉलिंस और लेंपियर
2. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, 454, सुचेता महाजन
3. आधी रात को आजादी, 96, कॉलिंस और लेंपियर

खतरनाक संभावनाओं से भरा था । इससे न केवल उसकी अंतरराष्ट्रीय स्थिति को क्षति पहुंचती अपितु उसकी प्रतिष्ठा भी धूल में मिल जाती, वरन कोई ऐसी शक्ति न रहती जिससे ब्रिटेन समझौता कर सकता था ।"[1]

कांग्रेस राष्ट्रीय आंदोलन का प्रतीक बन चुकी थी, जनता में उसकी छवि न केवल देश भक्ति की थी अपितु अखण्ड भारत की भी थी । "कांग्रेस के जिम्मे दो काम थे - पहला विभिन्न वर्गों, समुदायों, समूहों और अंचलों को एक राष्ट्र के ढांचे में ले आना तथा दूसरा उस उदीयमान राष्ट्र को ब्रिटिश शासकों से मुक्त कराना । राष्ट्रवादी चेतना का प्रचार कर, कांग्रेस इस दूसरे काम में तो सफल रही, लेकिन वह राष्ट्रवादी निर्माण का काम पूरा नहीं कर सकी - खास कर मुसलमानों को राष्ट्र के साथ नहीं जोड़ सकी ।"[2]

"भारत की अखण्डता में विश्वास रखने वाली कांग्रेस ने विभाजन को क्यों स्वीकार किया, यह अब भी मुश्किल सवाल है । .... सबसे आश्चर्य की बात तो यह है कि गांधी जी तक ने अपनी मूक स्वीकृति दे दी । क्यों ? साम्यवादियों और गांधीवादियों, दोनों का मानना है कि नेहरू और पटेल ने विभाजन को इसलिए स्वीकार कर लिया, क्योंकि सत्ता

---

1. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, 455, सुचेता महाजन
2. -वही- 447-48

का इंतजार उनके लिए असह्य हो रहा था ।"[1] वे एकछत्र शासन चाहते थे और जिन्ना इसमें आड़े आ रहे थे । "विभाजन के बाद उनको टोकने वाली, उनके ऊपर रोक लगाने वाली, उनसे हिस्सेदारी मांगने वाली कोई भी शक्ति भारत में नहीं रहेगी ।"[2] नेहरू की राय जिन्ना के प्रति अच्छी नहीं थी । 1938 में क्रिप्स को लिखे एक पत्र से पता चलता है । "जिन्ना साहब एक अनाड़ी व्यक्ति हैं । एक विधिविद् के नाते उनमें कुछ योग्यता है जरूर, लेकिन आधुनिक दुनिया और आधुनिक विचारधारा को समझने की उनमें बिलकुल शक्ति नहीं थी ।"[3]

क्या विभाजन आवश्यक था

कांग्रेस का व्यवहार बाद में मुस्लिम लीग के प्रति कठोर हो गया था । वादे के मुताबिक प्रतिनिधित्व देने से कांग्रेस का मुकरना और कांग्रेस अध्यक्ष पद से (1946 में) मंत्रिमण्डलीय मिशन योजना में अपनी मर्जी से संशोधन करना भयंकर भूल थी । 1937 के चुनाव में कांग्रेस विजयी होकर

---

1. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, 447-48, सुचेता महाजन
2. - वही - 456-57
3. स्वतंत्रता आंदोलन की विचारधारा, 35, मधुलिमये

लीग को शामिल न करने के पीछे उनका तर्क था । "कार्यक्रम क्रियान्वित करने के लिए कांग्रेस मतदाताओं के प्रति प्रतिबद्ध है, ऐसी स्थिति में दूसरे दलों के साथ हम लोग कैसे उन्हें हिस्सा दे सकते हैं जिनका कार्यक्रम हमारे कार्यक्रम से मेल न खाता हो ।"[1]

मंत्रिमण्डलय मिशन योजना में संशोधन करने वाली नेहरू की घोषणा को मौलाना अबुल कलाम आजाद गलत मानते हैं । "जिन्ना की राय यह रही कि कांग्रेस की सही-सही मंशा जवाहरलाल नेहरू के वक्तव्य में ही प्रकट हुई है । उनकी दलील यह थी कि जब अंग्रेज इस देश में बने हुए हैं और सत्ता कांग्रेस के हाथ में नहीं आयी, तभी जो कांग्रेस इतनी बार-बदल सकती है उसके बारे में इस बात का क्या भरोसा है कि अंग्रेजों के जाते ही वह फिर नहीं बदल जाएगी ।"[2]

सम्पूर्ण भारत को साम्प्रदायिक ज्वाला में जलता देख कर नेहरू का एकमात्र समाधान विभाजन था । लोहिया इसे कांग्रेसी नेताओं की कमजोरी मानते हैं । "यदि हिन्दू-मुस्लिम दंगों की वस्तुनिष्ठ स्थिति के बिना बूढ़े नेतृत्व के आत्मनिष्ठ तर्क फलीभूत नहीं होते और अगर हिन्दू-मुस्लिम दंगों के वस्तुनिष्ठ कारण और सड़े हुए नेतृत्व के आत्मनिष्ठ तर्क का

---

1. स्वतंत्रता आंदोलन की विचारधारा, 61, मधुलिमये
2. आजादी की कहानी, 176, मौलाना आजाद

मेल न होता, तो विभाजन का कड़वा फल न निकला होता ।"[1]

कांग्रेस का पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत के पठानों को धोखा देना कांग्रेसी नेताओं की अवसरवादिता व महत्वाकांक्षा को सूचित करती है । 1920 से कांग्रेस का साथ देने वाले पठानों के विश्वास व बहुमत के साथ भारत में विलय के पक्षधर खान अब्दुल गफ्फार खां के आत्म सम्मान को गहरी ठेस पहुंचाई । "वे एकदम हक्के बक्के रह गये और कई मिनिट तक एक शब्द भी उनकी जबान से नहीं निकला ..... खान अ॰ग॰ खां ने बारम्बार कहा कि अब अगर कांग्रेस ने खुदाई खिदमतगारों को इस तरह भेड़ियों की मांद में छोड़ दिया तो सीमा प्रांत इसे विश्वासघात समझेगा।"[2]

जिस तरह से कांग्रेस से भूलें हुई उसी तरह लीग से हुई हो, ऐसी बात नहीं थी, अपितु लीग का अध्यक्ष जिन्ना अपनी हठधर्मिता और दो राष्ट्र नीति के अतिरिक्त किसी बात के लिए राजी नहीं था । साम्प्रदायिकता का सहारा लेकर मुसलमानों को अलग राष्ट्र की घुट्टी ऐसी पिलाई कि वे अपने आप को भिन्न विश्वासों, भिन्न धर्म और भिन्न संस्कृति वाला समझने लगे थे । जिन्ना ने अलग राष्ट्र की अवधारणा को अपने अंतर्मन में गहरे तक बिठा लिया था । वे किसी भी प्रकार के समझौते के लिए तैयार नहीं थे ।

1॰ देश-विभाजन के अपराधी - 40

2॰ आजादी की कहानी - 215, मौ॰अ॰क॰ आजाद

"जिन्ना ने कांग्रेस और ब्रिटिश सरकार के खिलाफ अपनी पूरी ताकत लगा दी थी । कांग्रेस का मानना था कि विभाजन यदि जरूरी हो तो इसका फैसला आजादी के बाद होना चाहिए, जिन्ना की जिद थी, पहले विभाजन तब आजादी ।"[1]

जिन्ना का अहं और प्रतिष्ठा की भावना अखण्ड भारत के विपरीत थी, क्योंकि वह किसी अन्य नेता के समकक्ष या नीचे होकर नहीं रह सकते थे । "वे स्वतंत्र भारत में किसी दूसरे नेता के साथ न साझेदारी चाहते थे न उनके साथ समानता या बराबरी का व्यवहार चाहते थे । जिन्ना और नेहरू एक साथ सरकार में होते तो किसी भी हालत में जिन्ना दूसरे दर्जे का स्थान लेकर नेहरू के अधीनस्त बनकर नहीं रहते ।"[2]

1947 के आरम्भ से ही लीग की स्थिति कमजोर पड़ गई थी । पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत में लीग की सरकार गिर चुकी थी, खान साहब के नेतृत्व में कांग्रेस सरकार बनी । खिज्र हयात यूनियनिस्ट पार्टी वालों ने जिन्ना से संबंध तोड़ लिया था । बंगाल में निजामुद्दीन सरकार गिर गई । सिंध और असम में कांग्रेस के सहयोग से बात बनी हुई थी । ऐसे में लड़ के लेंगे पाकिस्तान का नारा जबानी और खोखला ही साबित हो रहा था ।

1• भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, 454, सुचेता महाजन , [redacted],{सं•विपिन चंद्र}
2• स्वतंत्रता आंदोलन की विचारधारा, 32, मधुलिमये

"कांग्रेस में जब गांधी जी की शक्ति का उदय हुआ तो जिन्ना पीछे हटने लगे ।"[1]

मंत्रिमंडल में उचित स्थान न मिलने व 1937 के चुनाव परिणाम देखकर उन्होंने सोचा "बालिग मताधिकार पर आधारित प्रतिनिधि लोकतांत्रिक स्वराज्य में उनको सत्ता में कोई हिस्सेदारी नहीं मिलने वाली है । अत: अलगाववादी पृथकतावादी प्रवृति मुस्लिम नेतृत्व में घर करने लगी ।"[2] इन परिस्थितियों में जिस साम्प्रदायिकता को जिन्ना ने अपनाया "इस नई सूरत का धार्मिक भेदभाव से कोई सरोकार नहीं था ।"[3]

जिन्ना अंतर्राष्ट्रीय अराजक व आतंकवादी तत्वों से मिलने से भी नहीं झिझकते थे । "आगा खां के नेतृत्व में ये लोग इतने नीचे उतर गये थे कि इंग्लैंड में सार्वजनिक जीवन के सबसे अधिक प्रतिक्रियावादी और भारत ही नहीं, बल्कि सभी प्रगतिशील सम्प्रदायों की दृष्टि में सबसे खतरनाक, व्यक्तियों तक के साथ मिलने तक उतारू हो गये ..... गोल मेज परिषद में यूरोपीयन एसोसियेशन के सदस्यों तक से समझौता कर लिया....

---

1. आधी रात को आजादी, 89, कालिंस और लेंपियन
2. स्वतंत्रता आंदोलन की विचारधारा, 60, मधुलिमये
3. मेरी कहानी, 846, नेहरू

यूरोपियन एसोसियेशन भारत को स्वतंत्रता का सबसे कट्टर और जोरदार विरोधी रहा है ।"[1] "राजनीति में पिछड़ जाने के कारण कुण्ठा और हताशा के शिकार जिन्ना शनै-शनै राष्ट्रीय आंदोलन की मुख्यधारा से अलग होते-होते मुस्लिम पृथकतावाद के वरिष्ठ एंव शक्तिवान प्रवक्ता बन गए ।"[2]

जिन्ना की महत्वाकांक्षा सर चढ़कर बोलने लगी थी । उन्होंने घोषणा कर दी "हिन्दुस्तान में **दो** राष्ट्र हैं, एक हिन्दू, एक मुस्लिम" इस पर नेहरू का कहना उचित जान पड़ता है "मैं नहीं जानता क्योंकि अगर राष्ट्रीयता की बुनियाद मजहब पर हो तब तो हिन्दुस्तान में बहुत से राष्ट्र थे ।"[3]

भविष्य में हिन्दुस्तान के साथ ब्रिटेन का संबंध रहना उनके लिए प्रतिष्ठा का प्रश्न बन चुका था । माउंट बेटन इस संबंध को बनाए रखने के लिए इतना लालायित थे कि वह संयुक्त भारत का स्वप्न देखने लग गये थे, पर जिन्ना को यह स्वीकार नहीं था । परेशान होकर उन्होंने जिन्ना से कहा - "यह बहुत बड़ी ट्रेजेडी है कि आप मुझ पर इतना दबाव

---

1. मेरी कहानी, 651, नेहरू
2. स्वतंत्रता आंदोलन की विचारधारा, 52, मधुलिमये
3. हिन्दुस्तान की कहानी, 536

डाल रहे हैं कि संयुक्त भारत का विचार छोड़ दूं । विभिन्न मतों और नश्लों के चालीस करोड़ आदमी, सब एक ही केन्द्रीय सरकार से बंधे हुए हो ।"[1]

वह मोहित कर देने वाला कूटनीतिज्ञ था । जो भी उसके आकर्षण क्षेत्र में आ जाता वह सम्मोहित हुए बिना नहीं रहता, पर जिन्ना अपवाद थे । "माउंट बेटन के शब्दों में - "भारत में मुझे जितना असम्भव-सा कार्य सौंपा गया है, इस का सही अंदाजा तब तक नहीं था, जब तक मोहम्मद अली जिन्ना से पहली मुलाकात न हुई ।"[2]

मुस्लिम साम्प्रदायिकता ने मुसलमानों को जिस भ्रम में रखा मौलाना अबुल कलाम आजाद ने स्पष्ट कर दिया है । "अजीब बात है, लेकिन है सच कि इन मुस्लिम लीगियों को यह समझा दिया गया था और अपनी बेवकूफी के कारण इन्होंने मान भी लिया था कि पाकिस्तान बन गया तो मुसलमानों को - चाहे वे मुसलमानों के बहुमत वाले प्रांतों के हों या अल्पमत वाले प्रांतों के - अलग राष्ट्र समझा जायेगा और उन्हें अपने भविष्य का निर्णय अपने आप करने का हक होगा । अब जब मुसलमान बहुल प्रांत हिन्दुस्तान से बाहर निकल गये, बंगाल और पंजाब भी बंट गये और मि॰ जिन्ना करावी रवाना हो गये

1॰ भारत में अंग्रेजी राज और मार्क्सवाद खण्ड दो, 474, रा॰वि॰शर्मा
2॰ आधी रात को आजादी - 87 - कॉलिंस और लेपियर

तो आखिरकार इन लोगों को यह अहसास हो गया कि उन्होंने बंटवारे से पाया कुछ भी नहीं, बस सब कुछ खोया ही खोया है । जिन्ना के आखिरी संदेश ने तो उनकी कमर ही तोड़ दी । उन्हें अब यह बात मालुम पड़ी कि बंटवारे का नतीजा सिर्फ यह हुआ है कि अल्प संख्यक वर्ग होने के नाते उनकी स्थिति पहले से कहीं कमजोर हो गई है । इसके अलावा, अपनी बेवकूफी से उन्होंने हिन्दुओं में रोष और विरोध की भावना और पैदा कर दी थी ।"[1]

सदियों के पनपते अलगाव, दो समुदायों की साम्प्रदायिकता और तत्कालीन नेताओं की अदूरदर्शिता एवं महत्वाकांक्षाओं ने विभाजन को अवश्यम्भावी बना दिया था ।

क्या विभाजन रोका जा सकता था ? यह आशावादी प्रश्न विद्वानों ने जब-तब उठाये है, इन टिप्पणियों से भी विषय पर दूसरे ढ़ंग से प्रकाश पड़ सकता है ।

लोहिया का बिना किसी लाग लपेट के मानना है कि विभाजन रोका जा सकता था, यदि हिन्दू समाज में असम्बद्धता जैसा असामाजिक तत्व न हुआ होता । "हिन्दुस्तान का विभाजन अपनी जातियों, मध्यम वर्ग और जनता के बीच असम्बद्धता की स्थिति का एक प्रकार का कानूनी

---

1. आजादी की कहानी, 232, मौ.अ.क. आजाद

दस्तावेज है । यही असम्बद्धता थी कि पहले-पहल मुस्लिम विजेताओं की छोटी टुकड़ियों ने हिन्दुओं को हराया उसी असम्बद्धता के कारण बाद में पठान, मुसलमान, तुर्की मुसलमानों के सामने झुके और यह चलता रहा ।"[1]

स्वतंत्रता आंदोलन के स्वरूप को लोहिया कम दोषी नहीं मानते । "हिन्दुस्तान की आजादी में ····· सक्रिय भाग लेने वाले प्राय: ऊँची जाति के थे निष्क्रिय भाग लेने वाले प्राय: ऊँची जाति के थे ··· भारतीय स्थिति की इस कमजोरी से छुटकारा पाना असंभव था, जैसे यह अभिशाप गांधी जी का और समूची आजादी के आंदोलन का पीछा कर रहा था ।"[2]

लोहिया की भांति मधुलिमये भी हिन्दू समाज व्यवस्था में व्याप्त अनुदारता और असम्बद्धता को दोषी मानते हैं । "अगर हिन्दू समाज में हिन्दू समुदाय में उदारता की भावना होती, समानता का व्यवहार करने की मनोवृत्ति होती, दूसरों को पहचानने की क्षमता होती, तो निसंदेह पाकिस्तान का निर्माण नहीं होता ।"[3]

जिन्ना विभाजन के दोषी थे, पर कुछ लोगों का मानना है कि जिन्ना की महत्वाकांक्षा को उत्प्रेरित करने का काम इकबाल ने पत्रों द्वारा किया था । "पत्रों ने जिन्ना के विचारों को स्वतंत्र मुस्लिम राज्य की

---

1. देश विभाजन के अपराधी, 73, लोहिया
2. - वही - 67
3. स्वतंत्रता आन्दोलन की विचारधारा, 75, मधुलिमये

दिशा में मोड़ने का अथक प्रयास किया । आगे चलकर जिन्ना साहब को उन्होंने स्पष्ट सलाह दी कि हमें जिन प्रांतों में मुसलमान अल्प संख्यक हैं, उन मुसलमान अल्प संख्यकों को फिलहाल भुला देना चाहिए और पश्चिमोत्तर तथा पूर्ण हिन्दुस्तान में स्वतंत्र मुसलमान राज्यों के निर्माण पर ही अपनी शक्ति केन्द्रित करनी चाहिए ।"[1]

विभाजन को रोकने के लिए हिन्दुस्तान में एक शख्स अपनी पूरी अंतरात्मा की पुकार पर डटा हुआ था । भले ही उन पर मुसलमानों के पक्ष में अति उदारता बरतने के आरोप लगाए जाते रहे पर वे अडिग रहे अंतिम सांस तक, "अगर कांग्रेस बंटवारे को स्वीकार करना चाहती है तो उसे मेरी लाश पर से गुजरना होगा जब तक मैं जीता हूँ मैं कभी हिन्दुस्तान का बंटवारा स्वीकार न करूंगा । और जहां तक मेरा बस चलेगा कांग्रेस को भी स्वीकार न करने दूंगा ।"[2] गांधी जी की भाँति मौलाना अबुल कलाम आजाद भी विभाजन के पक्षधर नहीं थे ।

उपरोक्त विश्लेषण के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि विभाजन तत्कालीन साम्प्रदायिक कूटनीतियों, नेताओं की खोखली प्रतिष्ठा और अदूरदर्शिता पूर्ण कार्यों के साथ-साथ हिन्दू समाज में व्याप्त असम्बद्धता व अलगाव तथा मुसलमानों की धार्मिक सांस्कृतिक भिन्नता व कट्टरता

---

1. स्वतंत्रता आंदोलन की विचारधारा, 75, मधुलिम्ये
2. आजादी की कहानी, 208, मौ.अ.क. आजाद

जिम्मेदार थी । अंग्रेजों की उपनिवेशवादी व साम्राज्यवादी कूटनीतियों की कथित चालों में पनपी साम्प्रदायिकता व भेदभावपूर्ण कार्य सब मिलकर दो खण्डित राष्ट्रों के रूप में सामने आये हैं । न चाहते हुए भी सामान्य जनता को अपनी जन्म भूमि से उखड़ना पड़ा और थोपे हुए विभाजन को खून का घूंट पीकर स्वीकार करना पड़ा था ।

- x - x -

दूसरा अध्याय

झूठा सच और देश विभाजन

झूठा सच में साम्प्रदायिकता

झूठा-सच में साम्प्रदायिकता छोटी सी घटना के बाद विकसित होती है । छोटी-मोटी वारदातों को नजर अंदाज करते हुए सभी सम्प्रदाय के लोग बिना किसी भेदभाव के लाहौर शहर के गली मोहल्लों में निवास करते हैं । सीनेट हाल की मामूलीसी घटना पूरे शहर में जहर फैला देती है और राजनीति को सक्रिय कर देती है ।

सनातन धर्म कालेज में बी॰ए॰ की परीक्षा के समय एक छात्र नकल करते हुए पकड़ा जाता है । परीक्षक नकल के कागज और परीक्षा पुस्तिका सौंप देने की आज्ञा देते हैं । मना करने पर परीक्षा भवन से बाहर निकल जाने का आदेश दे देते हैं । छात्र सोमराज साहनी न केवल परीक्षक के आदेश का उलंघन करता है अपितु परीक्षक की पिटाई तक कर देता है । यह अनैतिक घटना कालेज के लिए अशोभनीय है और कालेज के सर्वोच्च अधिकारियों द्वारा दोषी को दण्ड देने का दायित्व हो जाता है, किंतु यह परिसर की घटना न केवल शहरभर के लिए खबर बनती है अपितु पत्रों व राजनैतिक दाँव-पेचों का कारण बन जाती है ।

दैनिक पत्रों के लिए यह घटना मात्र घटना नहीं रह जाती अपितु अपने-अपने पक्ष में भुनाने का अच्छा अवसर मिल जाता है । सियासत के लिए सोमराज साहनी एक मुजरिम है - "सीनेट हाल के फिसाद का मुलाजिम

लापता । सोमराज साहनी, तालिबइल्म सनातन धर्म कालेज पर मजिस्ट्रेट के सामने पेश होने के लिए समन जारी ।"[1] किंतु छत्रपति दैनिक का समाचार मात्र समाचार नहीं रह जाता अपितु साम्प्रदायिक घटना बन जाता है । "तास्सुब की इंतहा .... राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के कारकुन पर लीगी प्रोफेसर का कहर ! मोतबिर जरिये से मालूम हुआ है कि सनातन धर्म कालेज के तालिबइल्म सोमराज साहनी पर अरसे से लीगी प्रोफेसर दीन मुहम्मद की नाराजगी चली आ रही थी । वह तास्सुब का शिकार होने से बच नहीं सका । लीग की सल्तनत क्या रंग लायेगी ।"[2]

इस घटना पर सामान्य नागरिकों की प्रतिक्रिया अलग-अलग बनती है । "हिन्दू लड़के ने मुसलमान प्रोफेसर को पीट दिया।" यह बात दीवान चन्द को पता चली तो बोला - "शाबास पट्ठे !" बेचारे को तंग किया होगा । इन मुसलमानों की उसने सुबह-सुबह भयंकर गाली दे दी ।"[3] दूसरी तरफ मास्टर लोग अनुशासन की दुहाई देते हुए छात्र को भयंकर से भयंकर दण्ड देने की बात करते हैं । "यूनिवर्सिटी के प्रोफेसरों का इस प्रकार अपमान होगा तो साधारण मास्टरों के लिए तो सड़क पर चलना भी संभव नहीं रहेगा । ऐसे विद्यार्थी को तो बेंतों की सजा दी जानी चाहिए, जेल

---

1. झूठा-सच प्रथम खण्ड - 49 - यशपाल
2. -वही -
3. -वही - 48

की सजा होनी चाहिए। सदा के लिए यूनिवर्सिटी से बहिष्कृत करके उदाहरण स्वरूप दण्ड दिया जाना चाहिए ।"[1]

हिन्दू व मुसलमान लोगों की राय सम्प्रदाय विशेष से प्रेरित हो जाती हैं । वे दूसरे सम्प्रदाय को अधिक और स्वयं को कम दोषी बताते हैं ।

राजनीति से संबंध रखने वाला सुख लाल का वक्तव्य दूसरे सम्प्रदाय को उत्तेजित करने वाला है । प्रोफेसर को गाली देकर सुख लाल बोले - "उसकी मजाल क्या है कि हमारे लड़के की बेइज्जती करे । इस ..... उन्होंने फिर गाली दी, "रजिस्ट्रार को पूछता कौन है ? हमारी पहुंच भी लाट जेकिंस तक है । यह फौजदारी का मुकदमा हमारे लड़के पर करेगा ? हमें नहीं जानता ! उसी के दरवाजे पर उसे सौ जूते न लगवा दूँ तो मुझे क्षत्री नहीं भंगी के बीज से पैदा समझना । क्या समझते हो । लाहौर में एक मुसलमान को जिंदा नहीं छोड़ूंगा । हम सूरज वंशी हैं, प्राण जाय पर वचन न जाये ।"[2]

शासन का अधिकार देने के लिए ब्रिटेन से मंत्रिमंडल ने अपने तीन प्रतिनिधि भारत भेजे थे । कांग्रेस और लीग की प्रतिद्वंद्विता पर पूरे भारत

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 48
2. - वही -

की आँख लगी थी, किंतु सीनेट हाल की घटना ने सबका ध्यान खींच लिया । पहुँचे हुए व्यक्ति सुख लाल साहनी आर॰एस॰एस॰ और कांग्रेस के सदस्य डा॰ राधे बिहारी के पिछले चुनाव में सहायक रहे थे । डा॰ साहब मुख्यमंत्री खिजरहयात को परामर्श दे आते हैं कि "मामले ने साम्प्रदायिक रंग ले लिया है । हिन्दुओं को आपकी सरकार से खामुखाह आशंका हो जाएगी ।"[1] रजिस्ट्रार, प्रो॰ दीन मुहम्मद के मामले पर उचित निर्णय न होने से हाई कोर्ट में दरख्वास्त देने पर तुले हुए थे । पंजाब में खिजरहयात कांग्रेस के सहयोग से सरकार चला रहे थे । वे हिन्दुओं को नाराज करके कांग्रेस का समर्थन नहीं छोड़ना चाहते थे । अत: राजनीतिक स्वार्थ के चलते खिजर हयात मामले को रफा दफा करते हैं । दीन मुहम्मद को पेशावर कालेज का प्रिंसिपल का पद देकर व हिन्दुओं को संतुष्ट करने के लिए जाँच कमेटी गठित करते हैं जिससे निर्णय को टाला जा सके ।

एक छोटी सी घटना माहौल को गरमा देती है और राजनीतिक समर्थन को देखते हुए किसी निर्णय पर पहुँचे बिना मामला खत्म करके दोनों सम्प्रदायों में एक प्रकार की रिक्तता जन्म लेने का अवसर प्रदान करते हैं ।

भोला पांधे की गली में रहने वाले हिन्दू-मुसलमान अच्छे पड़ौसी की तरह रहते हैं किंतु हिन्दू रक्षा कमेटी की ओर से आयी युवतियों ने

1॰ झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 50

उनके मन में साम्प्रदायिकता का बीज डाल दिया । युवती कहती हैं - "बहिनों क्या तुम्हें नहीं मालूम कलकत्तें में मुसलमानों ने हजारों हिन्दू भाइयों को कत्ल कर डाला, हमारी सैकड़ों बहू बेटियों को बेइज्जत कर डाला है । अफसोस है, तुम्हारी गली में यह लोग अब भी सौदा बेच लेते हैं ।"[1] इसकी प्रतिक्रिया तुरंत होती है और कर्तारो कह उठती है "मुसल्लों से सौदा क्यों लें हम तो सौ बार हिन्दू भाइयों से ही खरीदें ।"[2] रोज सौदा बेचने वाले मुसलमानों को मुहल्लों में आने से रोक दिया जाता है, जबकि हिन्दू अधिक महंगा बेचते हैं, पर सम्प्रदायगत सोच उन्हे बाध्य करती है ।

ज्ञान देवी कलकत्ता के झगड़ों और बम्बई में मुस्लिम लीग की कार्यवाही की बात करती हैं और बताती है - "मुसलमान मरे खूब तैयारी कर रहें हैं । पानी के नल कटवा-कटवा कर बंदूके बना रहे हैं । मुसलमानियों ने भी छूरे रख लिये हैं । हमी लोग सोये हुए हैं । तुम्हें चाहिए अपने घर के सब मर्दों को अखाड़े भेजो सब लोग लाठी, तलवार, बंदूक चलाना सीखें नहीं तो तुम्हारी जायदादें कहां बचेंगी ।"[3] वे पुरूषों को हथियार रखने की सलाह ही नहीं देती अपितु महिलाओं को भी कृपाण रखने की सलाह देती हैं और रानी झांसी, पद्मनी की वीरता की याद दिलाती हैं ।

---

1. झूठा सच, - 58
2. - वही -
3. - वही - 63

रक्षा कमेटी वाली युवतियां हिन्दू भाइयों की सहायता के लिए कपड़े और चंदे की मांग करती हैं तो वे अपनी गरीबी और तंगी में भी सहर्ष तैयार हो जाती हैं । उनके तन पर पूरा कपड़ा नहीं है पर धर्म के नाम पर कह उठती हैं - "हाँ बहिन जी, अपने भाई बहिनों के लिए क्यों नहीं करेंगे । वे कौन पराये हैं ? जैसी अपने गात की लाज, वैसी अपनी बहिनों की लाज । हम से जो बन पड़ेगा, करेंगी ।"[1]

ज्ञान देवी की बातें भोली भाली महिलाओं पर प्रभाव डालती हैं, पर साम्प्रदायिक भेदभाव को झूठा मानने वाली नई पीढ़ी की युवती तारा जब कहती है "मुसलमान नहीं लड़ते अपितु अंग्रेणों के कहने से लड़ते हैं ।" तारा की बात ज्ञान देवी को पसंद नहीं आती, कतारो और बसंत कौर कहती है - "औते (निर्बंसिये) मुसलमान ही तो लड़ते हैं । हिन्दू बेचारे कहां लड़ते हैं । लड़े हमारी जूती । हमें कोई मारेगा तो हम नहीं लड़ेंगे लहू पी लेंगे ।"[2] प्रतिकार "लहू पी लेंगे" में अभिव्यक्त होने लगता है । जो थोड़ी देर पहले तक मुसलमानों से सौदा खरीदती थी, वही प्रचार से प्रभावित होकर बदल जाती हैं ।

सम्प्रदायगत भावना में बहकर विचार खो बैठने वाले बहुत थे, पर कुछ वस्तु-स्थिति को समझने वाले थे । जो जानते थे कि असली दुश्मन

---

1. झूठा-सच, 63
2. - वही - 64

मुसलमान नहीं है अपितु कोई और है । तारा ने ज्ञान देवी से कहा - "बहिन जी हिन्दू मुसलमान का झगड़ा तो व्यर्थ की मूर्खता है । झगड़ा कर जायेंगे कहां । वही तो दोनों का घर है । हमारी असली लड़ाई तो अंग्रेजों से है जिसने मुल्क पर कब्जा कर रखा है ।"[1]

धर्म के नाम पर दो सम्प्रदाय के भोले-भाले लोगों को आसानी से भड़काया जा सकता है और प्रचार प्रभाव को बढ़ा देता है ।

मुसलमानों में हाफिज़ इनायत अली साहब का बहुत प्रभाव और आदर है । उन्हें बड़ी ग्लानी थी कि वे सहधर्मियों का हित नहीं कर सके । इसलिए उन्होंने पुरा समय और शक्ति इस्लाम को वैज्ञानिक धर्म सिद्ध करने के साथ-साथ गैर-मुसलमानों को मुसलमान बनाने और मुसलमानों को पक्का और सच्चा मुसलमान बनाने लगे थे । हाफिज साहब को जब पता चला कि नब्बू के घर में कोई हिन्दू लड़की है तो वे आदर के साथ लिवा लाते हैं । वे उसे मुसलमान बनने के लिए प्रेरित करते, इसके लिए रोज कुरान सुनाते । ऐसे प्रसंग जिसमें खुदा और उसके पैगम्बर पर एतबार रखने वालों को जन्नत मिलने और ईमान न लाने वालों को दोजख की आग में जलाये जाने की चेतावनी रहती । हाफिज जी ने कहा - "उस रहीम-करीम ने तुझे दोजख की आग से बचाकर जन्नत के बाग

---

1. झूठा-सच, 65

में दूध और शहद के दरियाओं के किनारे खजूरों की छाया में आराम कर सकने लिए ही रहम करके इस घर में पहुंचाने का जरिया किया है । उसने जो रहम तुझ पर किया है, उसके लिए तुझे उसका शुक्रगुजार होना चाहिए ।"[1] तारा को हाफिज जी के विचार सुनकर असद की बात याद आती है । "हिन्दू कोई मजहब और धर्म विश्वास नहीं है वह एक समाज और संस्कृति है । उसमें विश्वासों के बंधन हैं । आप भगवान में विश्वास करें तो भी अपने आपको हिन्दू कह सकते हैं । एक भगवान में या अनेक में ..... । इस्लाम ऐसी स्वतंत्रता सहन नहीं कर सकता । इस्लाम चिंतन का नहीं विश्वास का मार्ग है । आप खुदा से मुनकिर तो है तो काफिर है ।"[2]

हाफिज जी हिन्दू धर्म को पिछड़ा-असभ्य और बर्बर समझते हैं - "वे लोग औरत को अपने हैवानों की तरह खानदान की जायदाद समझते हैं । बेवा को खाविंद की लाश के साथ जला देना सवाब समझते हैं । इससे ज्यादा हैवानियत क्या होगी ? इस्लामी शरअ में लड़के-लड़की दोनों को जायदाद पर हक दिया गया है तलाक का हक दोनों को हासिल है ।"[3]

---

1. झूठा-सच, 353-54
2. - वही - 349
3. -वही - 348

हिन्दू धर्म में औरत की दयनीय स्थिति के बारे में खुरशीद और उसकी सास भी बताती हैं "मुसलमानों में जुल्म नहीं हो सकता । मुसलमानों में तो निकाह पढ़ने से पहले वकील लड़की की रजामंदी पूछ लेता है । लड़की इंकार कर दे तो निकाह हरगिज नहीं हो सकता ।"[1] हाफिज जी का पूरा घर तारा को मुसलमान बनाने में लग जाता है पर वह दोनों धर्मों में खामियां देखती है । लड़कियों से शादी के पूर्व रजा-मंदी पूछने का नियम तो उसे हिन्दू धर्म में भी याद आता है पर नियमों का क्या ! जैसे नब्बू और रूक्का का संबंध याद आता है तो उसका मन मैला हो जाता है कि सभी धर्म डींग हांकते हैं । औरत सिर्फ औरत है जो दोनों जगहों पर अभिशप्त है ।

हिन्दू रक्षा कमेटी और हाफिज जैसे सम्प्रदायों में भेदभाव फैलाने वाले एकमात्र अकेले नहीं थे, अपितु अंग्रेजों की साम्राज्यवादी नीति भी थी । जब असद देखता है कि मुल्ला मस्जिदों से चिल्ला-चिल्ला कर हथियार इकट्ठा करने की बात कर रहे तो दूसरी तरफ हिन्दू रक्षाकमेटी वाले सुरक्षा के नाम पर जहर फैला रहे हैं । ऐसे में साम्प्रदायिक दंगों के विस्फोट का पूर्वानुमान लगाया जा सकता है । ऐसी परिस्थितियों में असद प्राणनाथ को गवर्नर से बात करने को कहता है । डा॰ प्राणनाथ जो गवर्नर का आर्थिक सलाहकार भी हैं, अंग्रेजों की कूटनीति को स्पष्ट करता

1॰ झूठा-सच, 348
2॰ - वही - 69-70

हुआ बताता है - "मुझ से गवर्नर ने पंजाब के किसानों में फैले असंतोष के आर्थिक कारणों के विषय में रिपोर्ट मांगी थी । उसे मालूम है कि किसान भूमि व्यवस्था में परिवर्तन के लिए विद्रोह करने पर तुले हैं । ... किसानों की ओर से सरकार पर आते संकट को टालने का फिलहाल यही उपाय हो सकता है कि वे अपनी समस्या साम्प्रदायिक झगड़ों में भूले रहें । यदि लीग और कांग्रेस आपस में नहीं लड़ेंगे तो अब सरकार के लिए इनमें से किसी एक को भी दबाना संभव नहीं रहा है । जेंकिन्स तो कैबिनेट मिशन को यह दिखा देना चाहता है कि हिन्दुस्तानियों को शासन का अधिकार सौंपना व्यावहारिक नहीं है ।"[1]

साम्यवादी असद के साथी देश की एकता और आजादी के दुश्मन अंग्रेजों से अधिक साम्प्रदायिक राजनीतिक संघर्ष को मानते हैं । साथी हीरा सिंह और प्रद्युमन भाषण देते हैं - हिन्दुस्तान की आजादी का दुश्मन ब्रिटिश साम्राज्यवाद तो है ही जो हिन्दुस्तानी कौम के हिन्दू-मुस्लिम भागों को आपस में लड़ाकर अपने वश में किये हुए हैं । किंतु मुल्क की आजादी के सबसे बड़े दुश्मन वे लोग हैं जो हिन्दुस्तान की राजनीति को साम्प्रदायिक संघर्ष का दृष्टिकोण दे रहे हैं ।"[2] साम्यवादी साम्प्रदायिकता का विरोध करते हैं । जब उन्हें पता चलता है कि मुस्लिम महिलाओं का जुलूस निकलेगा तो जुबेदा और गुट्टू अन्य छात्राओं को बुलाकर बताती हैं - "भाई नरेन्द्र ने

---

1. झूठा-सच, 69-70
2. - वही - 120

कहा है कि आज चार बजे तुहारी दरवाजे से मुस्लिम महिलाओं का जुलूस निकलेगा । तुम भी उसमें रहो तो जुलूस साम्प्रदायिक रंग न ले सकेगा । हम लोग साम्प्रदायिक नारे नहीं लगने देंगी ।"[1]

लाहौर में लीग के जुलूस साम्प्रदायिक रंग लेने लगे थे । प्रति संध्या "अल्ला हो अकबर" ! मुस्लिम लीग जिंदाबाद ! खिजर मिनिस्ट्री जिंदाबाद ! लीग मिनिस्ट्री कायम हो ! पाकिस्तान लेके रहेंगे । ऐसे नारों को रोकने का प्रयास साम्यवादी कर रहे थे, तो दूसरी तरफ पुरी परोपकार में लिखता है - "साम्प्रदायिक उत्तेजना से भी राजनीति और साम्प्रदायिक घृणा और द्वेष का तूफान क्षितिज पर उठ रहा है । यह तूफान सार्वजनिक नागरिक जीवन का अंत कर देगा । उस समय हिन्दू-मुस्लिम इत्तहाद के नारे याद न रहेंगे ... ।"[2] जब कभी जुलूसों में रेलवे मजदूर शामिल हो जाते तब नारों के भाव बदल जाते - हिन्दू-मुस्लिम एकता और हिन्दुस्तान एकता के नारे लगाने लगते । साम्प्रदायिक मांग के विरोध में पुरी ने पेराकार में लिखा - "राजनैतिक दलों को हम यह चेतावनी देना आवश्यक समझते हैं कि पाकिस्तान की मांग साम्प्रदायिकता के आधार पर देश के बटवारे की मांग है । ऐसी मांग का आधार साम्प्रदायिक असहिष्णुता है, अन्य सम्प्रदायों के प्रति घृणा और द्वेष है । ऐसी प्रवृति से एकता और जन-कल्याण की आशा नहीं की जा सकती ।"[3]

---

1. झूठा-सच , 75
2. - वही -
3. - वही -

जिस साम्प्रदायिकता ने विभाजन को अवश्यम्भावी बना दिया था उसका जन्म यकायक नहीं हो गया था या फिर वह मात्र तात्कालिक कारणों का परिणाम मात्र नहीं थी, अपितु इन दोनों सम्प्रदायों में पृथकतावादी व अलगाववादी तत्व प्रारम्भ से ही पनपने लगे थे । जिस प्रकार मुसलमान हिन्दुओं से अलग महसूस करता था, वैसे ही हिन्दू सामाजिक व्यवस्था ने मुसलमानों को उचित सम्भावित स्थान प्रदान नहीं किया । प्रो॰ प्रापनाथ को खयाल आता है - "हम तो हिन्दू-मुसलमानों की दो कौमों होने की बात पर विश्वास ही नहीं कर सकते थे । .... सामूहिक सामाजिक रूप से जिनसे छू जाना असह्य समझते रहे हो, आज उन्हें अपना अंग बताकर बहलाने का यत्न करना धोखा नहीं है ? हमने चाहे जिस कारण से ऐसा व्यवहार किया हो, उसकी कीमत देनी होगी । हिन्दू-मुसलमानों के हिन्दुस्तान-पाकिस्तान के बंटवारे के बीज सरकारी नौकरियों को हिन्दू-मुसलमानों में साम्प्रदायिक अनुपात में बांटने के दिन या उनके चुनाव क्षेत्र अलग-अलग बना देने से नहीं बोया गया था बल्कि मुसलमानों को म्लेच्छ और अछूत समझने के दिन से ही बो दिया गया था ।"[1]

अलग-अलग कौम होते हुए भी हिन्दू-मुसलमानों में स्थान विशेष पर रहने से पड़ोसी भाव, कम घनिष्ठ नहीं था । शायद इसीलिए बंटवारे

1॰ झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 395-96, यशपाल

के समय जब बहुत से लाहौरवासी भागने लगते हैं, तब भी बीरमल वतन लाहौर से प्रेम करता है और हिन्दुस्तान के संबंध में कहता है - "भई वह देश ही दूसरा है । वहां के लोग हिन्दू तो हैं पर दूसरी तरह के आदमी हैं । उनकी बोली ऐसी है जैसे लोटे में कंकर डाल कर हिला दो । औरतें बस एक कपड़ा कमर में लपेटे रहती हैं । भई, उनका खाना दूसरा बरतना दूसरा । उबला चावल पानी में बासी करके खा लेते हैं । .... लाहौर के मुसलमान बैरी बन गये हैं तो अपने ही जैसे । बोली एक, पहरावा एक, खाना पीना भी एक जैसा ही है । मन्दिर-मस्जिद का ही तो फरक है ।"[1] भाषा और पहनावे की भिन्नता उन्हें अखरती है और जमीन से उखड़ने का दर्द उनके लिए असहनीय है ।

लाहौरवासी धार्मिक, सांस्कृतिक और पारम्परिक अलगाव के प्रचार में बह जाते हैं । धर्म के ठेकेदारों व सत्ता के आकांक्षी नेताओं के झूठे बहकावे में सामान्य जनता आ जाती है और बीरमल जैसे सद्भाव से रहने वाले साम्प्रदायगत अलगाव का खामियाजा भुगतते हैं ।

---

1. झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 281

राजनीतिक पार्टियां और विभाजन

उपन्यास में जहां कांग्रेस व लीग के नेताओं की स्वार्थी मनोवृत्तियों को उजागर किया है, वहीं अंग्रेजों की भेदभावपूर्ण साम्राज्यवादी कूटनीतियों का जम कर पर्दाफास किया है ।

अंग्रेजों की नीति साफ स्वच्छ प्रशासन देने की रही हो ऐसा कभी नहीं रहा । उनका उद्देश्य सिर्फ सत्ता को बनाए रखना था, चाहे इसके लिए साम्प्रदायिक दंगे ही क्यों न भड़काने पड़ें । असद दंगों की आशंका से विचलित होकर डा॰ प्राणनाथ से गवर्नर से सलाह करने के लिए कहता है, तब प्राणनाथ जबाब में अंग्रेजों की नीयत स्पष्ट होती है - "साम्प्रदायिक दंगों से नौकरशाही को भय नहीं है ....दंगों से नुकसान पहुंचता है कांग्रेस और लीग की शक्ति को ।"[1] सत्ता का चस्का अंग्रेजों को लग चुका था । "ब्रिटेन में बैठे अंग्रेज तो अपनी स्थिति के कारण अपने आपको भारत का बोझ उठाने में असमर्थ समझने लगे हैं परंतु हिन्दुस्तान में मौजूद अंग्रेज ब्यूरोक्रेसी अंतर्राष्ट्रीय स्थिति और ब्रिटेन की वर्तमान आर्थिक स्थिति जानती नहीं ।"[2]

अंग्रेजों की चाल आर्थिक स्वार्थ पूरा करने तक ही सीमित नहीं थी, अपितु वे दूर की भी सोच रहे थे कि दोनों स्वायत्त देश होकर भी फेडरेशन में रहे । काली प्राणनाथ की बात को आगे बढ़ाता हुआ कहता है - "दोनों

1॰ झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 69, यशपाल

2॰ - वही - 70

आटोनोमस होकर भी फेडरेशन में रहें तो अधिक हानि नहीं होगी लेकिन स्वयं एटली की नीति लीग से पृथक होने के लिए प्रोत्साहन दे रही है। अंग्रेज बंटवारे की जिम्मेवारी इसीलिए ले रहे हैं कि अपने हित के अनुकूल बंटवारा कर सकें।"[1]

लाहोर में एक खबर बिजली की तरह प्रचारित होती है - यूनियनिस्ट मंत्रिमंडल का टूटना भोला पांधे की गली में एक ही बात चलती है, बाबू गोविंद राम ने कहा - "खिजर मिनिस्ट्री में मुसलमानों को क्या कमी थी! खिजर कम तास्सुबी था। लीगी चाहते हैं, बिलकुल औरंगजेब का राज। अंग्रेज इतना जुल्म बर्दाश्त नहीं कर सकते।"[2] अंग्रेजों की चाले यहां तक सफल हो गई थी कि हिन्दू और मुसलमान दोनों आपस में अविश्वास करने लगे थे और अंग्रेजों पर विश्वास करने लगे।

अंग्रेज दोनों समुदाय के आपसी विश्वास पर विभाजन को आपसी संघर्ष का रूप प्रदान कर दिया। पुरी सोचता है - "एटली की 16 फरवरी की घोषणा और खिजर के त्याग पत्र के बाद पाकिस्तान का बनना, न बनना प्रचार, विचारों और बहुमत का प्रश्न नहीं हिन्दुओं और मुसलमानों की शक्ति का प्रश्न बन गया।"[3] इसी शक्ति के प्रश्न ने विभाजन के

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 228, यशपाल
2. - वही - 105
3. - वही - 125

दौरान जंगली कानून का रूप ग्रहण कर लिया ।

कांग्रेस और लीग दोनों अपने उद्देश्य और लक्ष्य से भटकने लगती हैं - दोनों की नीतियों में परिवर्तन आने लगता है । पैरोकार के सम्पादकीय को डाक्टर प्रभुदयाल पढ़ते हैं - "कांग्रेस और लीग दोनों ही संस्थाओं ने देश को गुलामी से मुक्त करने के लिए जन्म लिया था । ..... आज इन दोनों संस्थाओं के नेता पंजाब प्रांत का शासन गवर्नर के हाथों सौंप देने के लिए जिम्मेदार हैं । ..... आज ये दोनों राजनैतिक दल विरोधी शासन के कठपुतले और उन्हें सदा धोखा देने वाले को मित्र और साम्राज्य विरोधी सहायक शक्तियों को अपना शत्रु घोषित कर रहे हैं । जिस टोड़ी ने लीग के अहिंसात्मक आंदोलन पर लाठियां बरसायीं वह आज "लीग की भाई" है । दो मास तक हिन्दू-मुस्लिम इत्तहाद के नारे लगाकर साम्राज्यशाही और उसके काले कानूनों को समाप्त करने की लीग की प्रतिज्ञाओं का क्या हुआ ? जिस खिजर ने युद्ध काल में कांग्रेस के नेताओं को जेल में बंद करके पंजाब को अंग्रेजी साम्राज्यशाही के कदमों पर कुर्बान कर दिया था, वह आज इन कांग्रेसी नेताओं का अपना बन गया है ।"[1] इसी तरह से नीतियों को बदलने के कारण पुरी व रतन नेहरू को वैदरकाक कहते हैं - "नेहरू पटेल क्या है, वे तो वैदरकाक है {हवा में रुख पर घूमने वाले} सन 1945 में वह अहमद गढ़ जेल में 42 की क्रांति को कांग्रेस की

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 114, यशपाल

पालिसी के खिलाफ बता रहे थे । 46 में सरकार बन गयी तो 42 की क्रांति का सब सिला खुद ले लिया ।"[1]

कांग्रेस मुल्क बचाने के तर्क पर विभाजन स्वीकार कर लेती है । उनके लिए लीग की समस्या स्थगित कर देने वाली है, जिससे बाद में निपटा जा सकता है डाक्टर प्रभुदयाल कहता है - "देश की बेहतरी और आजादी ही असल चीज है । नेहरू पटेल क्या करें ! तकसीम न मंजूर कर सकने की जिद्द में बाकी मुल्क को भी डूब जाने दें ? लीग को तो अंग्रेज शह दे रहे हैं । एक बार अंग्रेजों से तो निबट लें, फिर लीग को भी समझ लेंगे ।"[2]

कांग्रेस के कुछ नेता अपनी मर्जी से निर्णय लेकर भेदभाव और अलगाव को बढ़ा देते हैं । अब्दुल कांग्रेस की कलई खुलना मानता है और खुश होकर असद से कहता है - "शाम को यूनियनिस्ट कैबिनेट के कांग्रेस मिनिस्टर ने माल रोड पर जुलूस निकाला है । कांग्रेसियों ने अपने झण्डों से हरा रंग फाड़ दिया है । हम तो खुश हैं । अब तो कांग्रेस ने मान लिया कि मुसलमान उनके साथ नहीं है । कायदे आजम तो हमेशा से कहते हैं कि कांग्रेस मुसलमानों की नुमाइन्दगी नहीं कर सकती है, वह हिन्दुओं की जमायत है ।"[3]

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 214
2. -वही-
3. - वही - 104

15 अगस्त 1947 को देश स्वतंत्र हो जाने के बाद लार्ड माउंट बेटन को गवर्नर बनाये रखने का फैसला मुसलमानों में भ्रम पैदा करता है और इसी भ्रम में वे अपने मध्यकालीन शासन का भ्रम जिंदा रखते हैं। हाफिज जी कहते है - "अखबारों में खबर है कि कायदे आजम जिन्ना ने लार्ड माउंट बेटन को साफ कह दिया है कि 14 अगस्त के दिन पाकिस्तान कायम हो जाने के बाद पाक पर अंग्रेजी सल्तनत का कोई हक नहीं रहेगा। पाकिस्तान के गवर्नर जनरल कायदे आजम होंगे। हिन्दू बनियों को देखो, उन्होंने तय किया है कि दिल्ली में हिन्दुस्तान का गवर्नर जनरल अंग्रेज लार्ड माउंट बेटन ही रहेगा। यह क्या आजादी हुई। हिन्दुओं में आजादी का जज्बा है ही नहीं, न उन्हें आजादी की जरूरत है। उन्हें तो सिर्फ मुसलमानों से और पाकिस्तान होने से बैर है। हिन्दू में हुकूमत करने की काबलियत और माद्दा नहीं होता। मुसलमानों को खुदा ने हुकूमत करने के लिए ही पैदा किया है।"[1]

शासन चलाने का मध्यकालीन गर्व आजादी के बाद भी बना रहता है। जब दिल्ली छोड़कर मुसलमान पाकिस्तान की ओर भाग रहे थे उसी समय दिल्ली की सिलवाली गली और दुर्रानी गली में मौलवी कासिम पाक जाने का फैसला करते हैं और उनका विश्वास है कि हिन्दुस्तान

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 351-52, यशपाल

अधिक दिन आजाद नहीं रह सकेगा अपितु पाकिस्तान में मिल जाएगा । "उन्हें विश्वास था कि पाकिस्तान कायम हो जाने पर "दीन" की ताकत जल्दी ही दिल्ली को भी फतह करके पाकिस्तान में शामिल कर लेगी । वे आस-पास की गलियों और मुहल्लों में मुसलमानों को "दीन" के नाम पर जंग के लिए तैयार रहने के लिए ललकारते रहते थे । पन्द्रह अगस्त के बाद, फिसादों ने शहर में स्थिति बदल दी थी । कासिम मुहम्मद काफिर की हुकूमत में रहना कुफ्र बता, कई मुस्लिम परिवारों के साथ पाकिस्तान के लिए कूच कर गये ।"[1]

हाफिज का मध्यकालीन शासन पर गर्व और कासिम के फिर से हिन्दुस्तान फतह करने के विश्वास ने हिन्दुओं के मन में लीग के प्रति भय ने जन्म लिया । जब लाहौर वालों को पता चला कि खिजर की सरकार टूट गयी है और लीग सत्ता संभाल सकती है, तो मास्टर रामलुभाया को लगता है - "लीग की हुकूमत हो जायेगी तो लोग सब स्कूलों में सिर्फ उर्दू लाजमी कर देंगे और कुरान को टैक्स्ट-बुक मुकर्रर कर देंगे, देख लेना ।"[2]

पुरी समाधान के रूप में सोचता है कि यदि कांग्रेस और लीग मिनिस्टरी बना लेते तो यह नौबत नहीं आती । यह पुरी का विश्वास था पर लीग का दृष्टिकोण तो विभाजन के अतिरिक्त और कुछ था ही नहीं तब वह सहयोग कैसे करती । प्रभुदयाल कहते हैं । "जिन्ना ने साफ

---

1. झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 60, यशपाल
2. - वही - प्रथम खण्ड, 106

इंकार कर दिया । इंटेरिम मिनिस्ट्री में रोज क्या होता है । जिन्ना तो केवल एक शर्त पर सहयोग कर सकता है कि पूर्ण गवर्नमेंट लीग के हाथों सौंप दी जाये ।"[1] लीग का दृष्टिकोण ही दूसरा है अलगाव व भेदभाव का । पांडे नैयर से कहता है - "लीग का दृष्टिकोण ही दूसरा है । वे लोग हिन्दू और मुसलमान को दो भिन्न जातियां मानते हैं । मिलकर रहना चाहते तो दो जातियों का सिद्धांत क्यों बनाते ? अलग पाकिस्तान की मांग क्यों करते ?[2] कांग्रेस का उद्देश्य मिलकर चलने का था । कनक नैयर से कहती है - "जीजाजी यहां की बात दूसरी है । यहां कांग्रेस का शासन है । कांग्रेस तो विभाजन चाहती ही नहीं थी, वह तो मुसलमानों को भी साथ और संतुष्ट रखना चाहती थी । कांग्रेस हिन्दू-मुसलमानों को दो भिन्न जातियां भी नहीं मानती ।"[3] लीग के कायदे आजम जिन्ना का हठ शासन में अधिक से अधिक हिस्सा की मांग करना था । पंडित गिरधारी लाल अपनी बेटी कनक से कहते हैं - "पंजाब में लीग, कांग्रेस और अकाली दल के संयुक्त मंत्रिमंडल बन सकने की संभावना, जिन्ना साहब के निर्णय से समाप्त हो गयी थी । जिन्ना साहब का निर्णय था - यदि कांग्रेस मंत्रिमंडल के आधे स्थान लीग को देकर शेष आधे में कांग्रेस और गैर

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 214
2. - वही - 316
3. - वही - 314-15

मुस्लिमों को भी स्थान देने के लिए तैयार नहीं तो पंजाब में मुस्लिम लीग अकाली दल से चाहे समझौता कर ले, कांग्रेस के साथ सहयोग नहीं करेगी ।"[1]

लीग में जिन्ना की हठधर्मिता तथा हाफिज जी व कासिम के भ्रमपूर्ण विश्वास ने अलगाव को गहराई प्रदान की । साम्यवादियों की भूमिका में देश की एकता पर आवश्यकता से अधिक बल की गूंज सुनाई देती है ।

असद नरेन्द्र और सुरेन्द्र कालेज फेडरेशन के साथी साम्प्रदायिक जुलूसों और नारों का विरोध करते नजर आते हैं । मुस्लिम औरतों के जुलूस में साम्यवादी लड़कियों को भेजते हैं । वे अंग्रेजों की चाल से कांग्रेस और लीग को भ्रमित न होने के लिए प्रयास करते हैं । नरेन्द्र "पिपुल्स एज" की नयी प्रति लाता है, जिस पर सभी कामरेड बहस करके निर्णय पर पहुंचते हैं - ब्रिटेन के मंत्रिमंडल के प्रतिनिधि कांग्रेस और लीग दोनों को मिथ्या आशाएं देकर, अपने कब्जे में रखने के लिए, उन्हें शब्दों से संतुष्ट कर रहे हैं । यह कैसे हो सकता है कि कैबिनेट मिशन की योजना से लीग को पाकिस्तान मिल जाय और कांग्रेस को अखण्ड हिन्दुस्तान भी मिल जाए । छुट्टियों में हमें अपने कार्य कर्ताओं को यह समझाना आवश्यक

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 164, यशपाल

है कि लीग और कांग्रेस का परस्पर सहयोग ही हिन्दुस्तान को फूट की आग से बचा सकता है ।"[1]

कम्युनिस्टों की स्वायत्तता की सोच को पुरी पाकिस्तान का समर्थन समझ लेना है, तब असद पुरी की अपनी नीति स्पष्ट करता है - "पाकिस्तान का मतलब क्या है, हिन्दुस्तान के एक सूबे में कांग्रेस की मिनिस्ट्री हो सकती है तो दूसरे में लीग मिनिस्ट्री हो सकती है । यही हक खुद इख्तियारी है । अब कांग्रेस बंटवारा स्वीकार कर रही है पर हम बंटवारे के खिलाफ हैं ।"[2] कम्युनिस्ट मुसलमानों की सुरक्षा का दायित्व लेते हैं, एकता के नारे लगाते हैं पर फिर भी वे गद्दार और हिन्दू विरोधी समझे जाते हैं - सरदार का मालिक, संचालक, असीर उनके से कहता है - "पी॰सी॰ जोशी कम्युनिस्टों का लीडर गया था न परसों गांधी के पास । कह रहा था हम होम गार्ड बनाकर मुसलमानों की रक्षा करेंगे । पहले इन लोगों ने 42 में गद्दारी की, फिर जिन्ना का समर्थन किया, अब गांधी के होम गार्ड बनेंगे ।"[3]

कम्युनिस्टों के चरित्र चित्रण में यशपाल ने कुछ आग्रह दिखाया है । लेखक ने उनकी कमजोरियों को नजर अंदाज करके देश भक्ति का चोला

1॰ झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 54, यशपाल

2॰ - वही - 77

3॰ - वही - द्वितीय खण्ड, 78

पहनाने का पूरा प्रयास किया है । "विभिन्न राजनीतिक स्थितियों और शक्तियों के संतुलन को प्राय: उसी रूप में प्रस्तुत किया गया है जिस प्रकार कम्युनिस्ट पार्टी करती थी, ... सामान्यत: व्यक्तियों के चरित्रांकन में भी कम्युनिस्टों के प्रति एक प्रकार का हलका-सा पक्षपात जैसा उपन्यास में महसूस होता है ।"[1]

विभाजन का आर्थिक पहलू

हिन्दू-मुसलमानों में आर्थिक विषमता का उपन्यास में चित्रण हुआ है । गरीब और बेकार मुसलमानों के मन में अमीर और सूदखोर हिन्दू की छवि शोषक के रूप में बन गई थी । हिन्दुओं के कर्ज तले दबे मुसलमान उनकी ज्यादतियों को भी बर्दाश्त कर रहे थे, किंतु जब लीग ने विभाजन का आश्वासन दिया तो वे हिन्दुओं की अमीरी और ऐशो-आराम से ईर्ष्या और द्वेष से भर उठे ।

शासन कार्य में मुसलमानों की भागीदारी हिन्दुओं की तुलना में कम थी किंतु जब सत्ता उनके हाथ में आ जाती तो वे अपने आदमियों को भरने लगते थे । ईश्वर कौर कहती हैं - "अंग्रेजों के लिए जैसे हिन्दू

---

1. अधूरे साक्षात्कार, 75, नेमिचंद जैन

वैसे मुसलमान । पंजाब में जब से सिकंदर और खिज्र वजीर बने, किसी हिन्दू को नौकरी मिलती है ? पहले समय में कहीं मुसलमानों को दफ्तरों के बाबू का काम करते देखा था ? चपरासी का काम करते थे, टांगे चलाते थे या दूसरे कमीने काम करते थे ।"[1]

हाफिज जी धर्म परिवर्तन करके हिन्दुओं को मुसलमान बना कर अपने धर्म के सदस्य बढ़ा रहे थे । पर उनके नौजवान बेटे अमजद को जनसंख्या से बड़ी बात गरीबी दिख रही थी । वह बोला - "अब्बा को तो फिक्र परेशान किये है कि जन्नत उजाड़ रह जायेगा । अगर पंजाब के सभी हिन्दू मुसलमान बनकर यहां ही बैठे रहते तो गरीब मुसलमानों को फायदा होता ।"[2]

हिन्दुस्तान से पाकिस्तान जाने वाले मुसलमानों का सामान पूंजी और स्थिति की कहानी कहता है । ड्राइवर कहता है - "हिन्दू अक्सर सवारियों पर आये, गाँव से किसान बैलगाड़ियों पर आ रहे हैं । बल्लो की हैड के रास्ते हिन्दू सिक्खों का बैलगाड़ियों, घोड़ों और ऊँटों पर पचास मील लम्बा काफिला आया है । .... हिन्दू सिक्ख लाये हैं, बक्से, संदूक, नकदी, जेवर और बाँड । यह लोग मिट्टी के हुक्के, टूटी चारपाईयां, चूल्हे, चक्की, मुर्गियां लिये चल रहे हैं । यही इनकी गृहस्थी थी । जिसके

---

1. झूठा-सच, प्रथम भाग, 65, यशपाल
2. - वही - 359

पास जो कुछ होगा, उसी से ममता करेगा, वही तो उठा कर ले जाएगा । ठीक ही कहते थे - होने का नाम हिन्दू, मुफलिसी का मुसलमान ।"[1] मुसलमानों की गरीबी के पीछे हिन्दू साहुकारों का पूरा हाथ था । बंती बताती है - बहिना, बाकर ही क्या, हम तो आस-पास के गांव में सबकी ही मदद करते थे । कौन काश्तकार जमींदार वक्त पर हिन्दुओं के यहां कर्जे के लिए नहीं आता ? तुम जानती हो, मुसलमान क्या जो कर्ज न ले ।"[2] इस कर्ज ने शोषित मुसलमानों को आक्रोषित किया और उनमें गुस्से को जन्म दिया । ड्राइवर बोला, "हिन्दू सैकड़ों वर्ष से इन लोगों को लूटते निचोड़ते चले आ रहे हैं, नहीं तो एक ही जमीन पर रहने वालों में अमीरी-गरीबी का इतना फरक क्यों होता है ? पंजाब की सब जायदाद हिन्दुओं के हाथों क्यों चली जाती । गरीब पहले गुस्से में मुसलमान हुआ दूसरा यह भी है । गुस्सा मजहब का भी है पर गरीबी का भी है बहिन जी ।"[3]

हिन्दू लोग बंटवारे की बात करने के साथ आर्थिक पक्ष पर बल देते हैं, सम्पत्ति को आधार मान कर बंटवारे को उचित समझते हैं । भोला पांधे की गली के लोग बहुमत के आधार पर नहीं अपितु जमीन जायदाद के

---

1. झूठा-सच, प्रथम भाग, 442, यशपाल
2. - वही - 413
3. - वही - 443

आधार पर बंटवारा चाहते हैं । "लाहौर में मुसलमान इक्यावन फीसदी है तो क्या हुआ जमीन जायदाद तो अस्सी फीसदी से ज्यादा हिन्दुओं की है ।"[1]. उन्हें विश्वास है कि लाहौर के आस-पास के अधिकांश हिस्से में मुसलमान रहते हैं पर सम्पत्ति हिन्दुओं की है इस आधार पर वह हिस्सा हिन्दुओं को मिलेगा । रावी के इस किनारे पर बसे लाहौर से हिन्दुस्तान का आरम्भ होगा । यदि रैडक्लिफ कमीशन लाहौर पाकिस्तान को देना उचित समझता तो जैसे लाहौर से उत्तर में सियालकोट तक और नीचे बहावलपुर खैरपुर तक पश्चिम का हिस्सा उन्हें दे दिया है, लाहौर भी दे देता । लाहौर में अस्सी फीसदी जायदाद हिन्दुओं की है, यह कौन नहीं जानता ?"[2] यदि जमीन एक स्थान से दूसरे स्थान पर उठकर नहीं जा सकती तो वे लोग जमीन को कैसे ले जाएंगे ?..... लायलपुर में ..... सत्तर अस्सी प्रतिशत भूमि और आबादी सिक्खों और हिन्दुओं की है । वे पाकिस्तान में क्यों रहे । क्या वे लोग भूमि उठाकर हिन्दुस्तान ले जायें ? हिन्दुस्तान की सीमा वहां क्यों नहीं ?"[3] भोला पांधे की गली वालों को विश्वास था कि विभाजन सम्पत्ति को ध्यान में रख कर किया जाएगा । "लाहौर में अस्सी प्रतिशत जायदाद हिन्दुओं की है इसलिए लाहौर पाकिस्तान में नहीं दिया जा सकेगा ।

---

1. झूठा-सच, प्रथम भाग, 213
2. - वही - 264
3. - वही - 252

अगर ऐसा हो भी गया तो वे लोग अपना घर बार नहीं छोड़ेंगे ।"[1]

विभाजन के लिए भले ही धार्मिक व राजनीतिक पहलू कम जिम्मेदार नहीं थे, फिर भी आर्थिक पहलू को कम नहीं आंका जा सकता है, क्योंकि आर्थिक विषमता ने मुसलमानों के मन में अलगाव को पनपने का पूरा अवसर दिया था ।

जनता की दृष्टि में विभाजन

जनता की इच्छा और आकांक्षा के विरुद्ध विभाजन ऊपर से थोंपा गया था । विभाजन झूठ था, राजनीतिक स्वार्थ था और साम्प्रदायिक उफान था । जनता धार्मिक व सांस्कृतिक भिन्नता के बावजूद एक साथ निवास कर रही थी । कुछ लोगों के लिए मानवीय पहलू प्रमुख था ।

भोला पांधे की गली में रहने वाले मुसलमान विभाजन की घोषणा सुनकर भयभीत होकर गली से भागने लगते हैं । सभी सहधर्मियों को जाता देखकर इमाम बख्श भी जाने की तैयारी करता है, यह देख कर महाजन की प्रतिक्रिया सिद्ध करती है कि देश का आम आदमी विभाजन नहीं चाहता था । ताई को रोकता हुआ महाजन कहता है - "ताई तू हमारी नाक क्यों कटवा

---

1. झूठा-सच, प्रथम भाग, 280, यशपाल

रही है ! तेरा दिल चाहता है तो ले महाजन सिर झुका देता है ; अपनी जूती हमारे सिर पर मार ले ! हमारे सिर कट जायेंगे तो कोई तुम्हारी तरफ नजर उठा सकेगा !"[1] महाजन के प्रगाढ़ प्रेम में सजातियों सा विश्वास है - फाता बुआ को । तभी तो वह महाजन की माँ से कहती है - "बंशी की माँ, तू पूछ ले शादा से, इसने मुझे भी चलने को कहा था । मैंने तो कह दिया चार भाई डोली में कंधों पर उठा के मुझे इस गली में लाये थे, अब चार भाई ही मेरी मिट्टी को खाट पर डाल कर कंधों पर इस गली से ले जायेंगे । जिसे जाना हो जाये, मैं नहीं जाऊँगी ।"[2] बुआ, ताई उस मुहल्ले की ममतामयी थी तो इमाम बख्श उस मुहल्ले के बुजुर्ग थे । ऐसे परिवार जैसे सदस्यों से बिछुड़े तो कैसा लगेगा । जो जा रहे हैं वे पागल है और यह पागलपन ज्यादा दिन का नहीं है । काली ने इमाम बख्श का हाथ अपने दोनों हाथों में लेकर समझाया - "ताया, यह सब पागलपन दो दिन का है । जो भाग कर गये हैं वो भी चार दिन में लौट कर आयेंगे । पाकिस्तान हुआ तो क्या और हिन्दुस्तान हुआ तो क्या । हम लोग तो लाहौरी हैं, डूंगी गली के पड़ोसी हैं । चल बैठ तू घर में । तेरी दुकान जल गयी है तो और बन जायेगी । रब्ब का भरोसा कर ।"[3] पड़ोसी के भाईचारे

---

1. झूठा-सच, प्रथम भाग, 225, यशपाल
2. - वही-
3. - वही -

प्रेम और स्नेह के आगे बंटवारा बौना नजर आता है ।

भू-भाग बंट गया और मिनिस्ट्री बदल गयी तो उससे क्या हुआ । क्या पड़ोसी भी बदल जाएंगे ? पत्रों में खबर पढ़ कर मुहल्ले में खलबली मच जाती है । जिनको पुरी समझाता है - "पाकिस्तान का मतलब मुस्लिम लीग की मिनिस्ट्री ही तो है । किसी की मिनिस्ट्री हो, हिन्दुओं-मुसलमानों को तो गली-मुहल्लों में एक साथ ही रहना है । हमें मिनिस्ट्रियों से क्या मतलब है ? हमें तो अपने पड़ौसियों से निभानी है ।"[1]

आबादी की अदला बदली हो रही थी । लोग जितना सामान साथ ले जा सकते थे, ले जा रहे थे । परिस्थितियों को देखकर पंडित जी ने रकम स्थानांतरित करने की सलाह दी तो नैयर को बात भ्रमपूर्ण लगी कि "आखिर यही न कि लाहौर पाकिस्तान में ही जायेगा । क्या यह सम्भव है कि पूरे हिन्दुस्तान के दस-बारह करोड़ मुसलमान पेशावर से लाहौर तक की जगह में समा जायें ? मुसलमान हिन्दुस्तान में रह सकेंगे तो हिन्दू भी लाहौर में रह लेंगे । डाक्टर, वकील, इंजीनियर तो पाकिस्तान को भी चाहिए । मैं सम्पत्ति लाहौर से क्या उठा लाऊं, मकानों को उठा लाऊं ?"[2] नैयर को लाहौर में रहना था सो वह सम्पत्ति को बदलना स्थानांतरित करना अनुचित समझता है । पंडित गिरधारी लाल लोगों को

---

1. झूठा-सच, प्र.ख., 212, यशपाल

2. - वही - 311-12, यशपाल

अपनी रकमें, बैंकों को लाहौर से बाहर दिल्ली और यू॰पी॰ की शाखाओं में भिजवाता देख वे भी ऐसा करते हैं पर पंडित जी लाहौर नहीं छोड़ सकते थे, किंतु कैश, दिल्ली ब्रांच में बदलवा दिया था । आम लोग निश्चय कर चुके थे कि लाहौर पाकिस्तान में हो जाने पर भी उन्हें वहां ही रहना था ।"[1]

कुछ लोगों की धारणा बन गयी थी कि मुसलमान स्वयं पाकिस्तान जाना चाहते हैं जैसा कि कौशल्या देवी कहती है - "जिनको हिन्दुस्तान रहना मंजूर नहीं वे जायें पाकिस्तान में ।"[2] यह सच नहीं था ड्राइवर विस्मय से बोलता है - "क्या कह रही हो बहिन जी ! मार काट कर निकाले गये हैं बेचारे ! इधर से हिन्दू, उधर से मुसलमान !"[3] रहने वालों को जबरदस्ती खदेड़ा गया, भगाया गया, दो पड़ोसियों को धर्म के आधार पर भगाया गया । अपनी जमीन से आदमी को खदेड़ना कितना अस्वाभाविक था मिर्ज़ा नैयर से कहता है - "लोगों को अपनी पुस्तैनी जगहों से अलग करना ऐसा है जैसे जिस्म के मास को हड्डियों से अलग करना है ।"[4]

1॰ झूठा-सच, प्र॰ख; 311, यशपाल
2॰ - वही - 442
3॰ - वही -
4॰ - वही - 255

स्त्री त्रासदी और देश विभाजन

विभाजन का सबसे अधिक दुष्प्रभाव औरतों पर पड़ा । चारों ओर से असहनीय हमले हुए । वह असहाय थी, असुरक्षित थी और अबला थी । मनुष्य की पशु शक्ति के आगे मजबूर थी । औरत के साथ मनुष्य की आदिम, कुत्सित मनोवृत्ति बिना किसी विधान के खुलकर सामने आयी । जिस संबंध को इज्जत के साथ चार दीवारी में रखा जाता है, उस संबंध के पराया होने पर आखिर आदमी क्यों कर दरिंदा हो जाता है ? नियति की मारी औरत दर-दर की ठोकर खाने के बाद जब अपने घर लौटती है, तो अति नैतिक मानसिकता उसे घर प्रवेश नहीं देकर - दुनियां से कूच करने के लिए मजबूर कर देती है ।

आदमी, आदमी को मार सकता है, काट सकता है, इससे आगे क्या कर सकता है । पर औरत लुटती है, बेइज्जत होती है और आबरू लुटने के बाद जिंदा भी रह गई तो - मुर्दा लाश बनकर रह जाती है । जीते जी मुर्दा बनने वाली औरत ही ऐसा कह सकती है - "जनाना तुम्हें जनने की ही कसूरवार है । सौ हजार बार पिटे मुंह तुम्हारा । लाख लानत है तुम पर । मर्द आपस में लुटते हैं, कत्ल करते हैं पर मर्द एक दूसरे को नंगा करके जिस्म की बेइज्जती तो नहीं करते ।"[1]

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 444, यशपाल

एक मुहल्ले में रहने वाले मुसलमान हिन्दू स्त्रियों को घरेलू संबंधों से पुकारते थे । पर बलवे के समय मानवीय रिस्ते धूल धूसरित हो गये । बंटी के घर में मुसलमानों का आना जाना रहता था, वही मुसलमान आकर विश्वास दिलाता है कि तुम्हें सुरक्षित गाड़ी में बिठा देंगे । बंती के पांचों घर के लोग कुएं के पास इकट्ठे हो गये तो पठानों की भीड़ ने हमें घेर लिया । हमारे गांवों के सिखों का भी मन बदल गया । वे भी उनके साथ हो गये । इसके बाद जवान लड़कियों को अलग किया और दूसरों को मार दिया और भगा दिया ।"[1] यह विश्वासघात मात्र एक तरफ से ही नहीं हुआ । रेल में बैठे मुसलमान ने रोते हुए कहा - "रब्ब को जाने क्या मंजूर है । हम लोग तो सब कुछ छोड़-छाड़ कर दोनों जवान बेटों, बहू और लड़की को लेकर चल पड़े थे । गांव के ही सिक्खों ने घेर लिया । बहु और लड़की को पकड़ ले चले ।"[2]

एक दूसरे के काफिलों पर हमला बोल कर जवान लड़कियों को उठा लिया जाता और यदि वह वृद्ध है या कम खूबसूरत है तो सर उड़ा दिया जाता । दो जाट मुसलमानों की दो लड़कियों को जबरदस्ती छीन लाते हैं । उन्हें दुख इस बात का होता है कि एक लड़की दूसरे साथी ने मार

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 414, यशपाल
2. - वही - 387

दी थी । दु:ख मानवीयता के लिए नहीं होता है, उन्हीं के शब्दों में - "वही तो असली काम की मटियारी थी, साले तूने उसकी छातियां नहीं देखी ? कसम है मेरी, जैसे लड़ाके तीतर चोंच उठाये हो, "कमबख्त तूने उसकी गर्दन ही काट दी ।"[1] कोई जवान लड़कियों की जवानी को लूट रहा था तो कोई धर्म युद्ध समझकर ऐसा कर रहे थे । बाकर ने कहा - "इन तीनों क्वांरी मटियारों को अलग कर लो । ये गनीमत का माल है । जो दीन दार बहादुर इनसे निकाह करना चाहे, ले जाये ।"[2] अपने धर्म के खातिर अपनी स्त्रियों की इज्जत करते हैं, अस्मत की रक्षा करते हैं ! किंतु जब वह दूसरे की हो तो सब उचित हो जाता है । तारा के साथ बलात्कार करने वाला नब्बू पड़ोसियों की धमकी का जवाब देता है - "तुम लोगों को क्या मतलब ! किसी मुसलमान औरत की तरफ तो आंख नहीं उठायी मैंने ! हिन्दू औरत है । वे लोग नहीं हमारी औरतों को खराब कर रहे हैं ? ..... मोलवियोंनेजिहाद का फतवा दिया है ।"[3]

लूट-खसोट कर मिली औरतों से पेशा करवाने के लिए बेचा जाने लगा । उधोदास के मकान में कैद बंती कहती है - "जब मुझे यहां लाया तो

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 391, यशपाल
2. - वही - 415
3. - वही - 343

लक्खी के साथ तीन और भी लड़कियां थीं । मेरे आने के दो दिन बाद वह कसाई सुबह-सुबह दो और मर्दों के साथ आया और उन तीनों को ले गया । महाराज जी जाने हम लोगों का क्या होगा ? यह सिर सड़ा किसी न किसी के साथ बेचेगा ही ।"[1] काफिलों की भीड़ से और स्टेशन से जवान लड़कियों को उठा लिया गया । "स्टेशन से जाने कितनी स्त्रियों लड़कियों को बम्बू काटों में भर-भर कर ले गये । मालूम नहीं सब कहां गयीं । जिसकी जो हालत की है, कोई गिनती थी । दस पंद्रह की ।"[2]

स्त्री से पेशा ही नहीं करवाया गया अपितु पुराने घिसे माल की तरह चौराहे पर बोली तक लगाई गई । "इसके लिए बोलो ! नया, कोरा, बिना बर्ता माल ! शक हो तो अपने हाथ से टटोल कर देख लो ।" ..... बोलो पहली बोली बोलो !" .... लड़की के शरीर पर कोई कपड़ा नहीं था । माल ग्राहकों को अच्छी तरह दिखा देने के लिए उसने लड़की की कमर के पीछे अपने घुटने से ठेस कर, उसके सब अंगों को सामने उभार दिया था । ..... लड़की के सूर्य की किरणों से अछूते शरीर के

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 419, यशपाल
2. - वही - 416

भाग छिले हुए संतरे की तरह, चेहरे की अपेक्षा बहुत - गोरे और कोमल थे ।......

.....भीड़ के बीच धरती पर कुछ और भी लड़कियां चेहरे बाँहों में छिपाये, घुटनों पर सिर दबाये बैठी थीं । उनके कपड़े भी धरती पर पड़े थे ।"[1] शरीर की छीछालेदर होने में क्या बचा था, मानवीयता का अंश कहीं से भी नहीं छूता । सीमा पर चेकिंग होती हैं और बगल में नट की तरह कनस्तर बजाकर सभी का ध्यान आकर्षित कर रहा है । "एक आदमी खेल करने वाले नट की तरह बाँस को ऊँचा उठाये था । उसके साथ के लोग नगाड़ों की तरह कनस्तरों को बजा रहे थे । कुछ लोग होठों पर उलटी हथेली रखे जदतुगती बकरी के देख कर उन्मादित बकरे की तरह ब्ब ! ब्ब ! ब्ब ! शब्द से हुंकार कर रहे थे । बाँस के सिरे पर एक स्त्री का नंगा शरीर था । स्त्री बांस के सिरे पर टांगे फैलाये अटकी हुई थी । दोनों टांगों पर ताजा खून क्षितिज से झांकते सूर्य की किरणों में चमक रहा था । स्त्री की गर्दन और बाहें निर्जीव, शिथिल लटकी हुई थीं । ...बांस उठा कर चलने वाले आदमी के सामने भी हाथों से चेहरे छिपाये चार पांच नंगी स्त्रियां धकेली जा रही थीं ।"[2] निरी पशुता में कोई कम न था ।

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 406, यशपाल
2. - वही - 444

"एक पक्ष के लोगों ने स्त्रियों का अनसुना करने की वीरता दिखाई है, दूसरे पक्ष के लोग कैसे स्वीकार कर ले कि वे कम पशु हैं । पशुता की होड़ में पीछे क्यों रहा जाये ।"[1]

देश भक्ति का इससे अच्छा और क्या प्रदर्शन हो सकता है कि यदि कोई जय हिंद कह दे तो ठीक अन्यथा उसे सड़क पर नंगी करके घसीटा जाये । "एक उन्नीस बीस वर्ष की जवान लड़की थी । वह छत पर से अकेली गोली चलाती रही । नीचे मुसलमान मर्दों ने हथियार डाल दिये तब भी वह लड़ती रही । उसके पास गोलियां खत्म हो गई तो पकड़ी गई । लोगों ने उसके सब कपड़े फाड़कर, चोटी पकड़ कर बाजार में घसीटा । उससे कहा गया तू जय हिन्द कह दे, छोड़ देंगे । उसने जय हिन्द नहीं कहा । उसका अंग-अंग काट दिया पर जब मुंह से निकला पाकिस्तान जिंदाबाद ।"[2]

मनुष्य की कुत्सित मनोवृत्ति और स्त्री की विडम्बना को इंगित करती है, लंती - "सब जोर-जुल्म के लिए औरत ही रह गयी बेहयाओं, नीचों का सब गुस्सा इसी बात पर उतरता है । गाली भी देते हैं तो इसी बात की । बेहया जहां से आते हैं, फिर उसी में डूबते मरते हैं, उसे ही बेइज्जत करते हैं ।"[3] स्त्री का द्वंद्व इसी में है - बेइज्जती, प्रेम, गाली

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 406, यशपाल
2. - वही-II,120, यशपाल
3. - वही - प्रथम खण्ड, 430

स्नेह एक ही बात पर है । सतवंत कहती है - "औरत को कुछ समझते हो नहीं । इसी के लिए मरते हैं और जुल्म भी इस पर । इनका सब प्यार, सब गुस्सा इसी से है ..... ये वहीं के कीड़े हैं । यह न हों तो औरत की बरबादी क्यों हो ?"[1]

स्त्री को परायों ने ही बेइज्जत और बेपर्दा नहीं किया अपितु हिन्दू धर्म की अति नैतिकता और कुंद मानसिकता ने उसका बसेरा छीन लिया । (दुर्गा) "घर से एक बार निकली, दर-दर ख्वार हुई तीमी को फिर कौन रखता है ? घर से निकली तीमी और डाल से टूटा फल उनका फिर मेल क्या ?[2] बंती तारा को साथ लेकर दिल्ली की गलियों में अपने घर वालों को ढूंढती है, समाज के दरिंदों से रक्षा करती हुई जब अपने घर पहुंचती है तो उसे सुनने को मिलता है "अब तू हमारे किस काम की, "मुसलमानों ने इसे छोड़ा होगा" मनोहर दास से जब बंती सुनती है - "उसे जो मंजूर था । हमें उजाड़ना, बरबाद करना था सो हो गया । हजारों का यही हुआ । उस की यही इच्छा ।"[3]

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 430, यशपाल
2. - वही - 424
3. - वही - द्वितीय खण्ड, 123

बंती के लिए घर के दरवाजे बंद हो जाते हैं । जिस आशा की किरण पर वह जीवित थी वह बुझ गई तो वह जी कर क्या करती । "बंती जोर से चिल्ला उठी .... मैं यहां ही मरूंगी । बंती फट्ट-फट्ट अपना माथा दहलीज पर पटकती जा रही थी । .... वह दहलीज पर अपना सिर मारती ही जा रही थी । .... तारा को गली की बिजली के प्रकाश में बंती का खून लाल-काला, दहलीज पर गिरता उठता चेहरा दिखाई दिया । उसकी चेतना जागी । .... एक मर्द ने आगे बढ़कर बंती को कंधों से पकड़ने का यत्न किया परंतु उसने फिर दो बार अपना माथा दहलीज पर पटका । ..... तारा ने उठकर फिर बंती का सिर पकड़ लेना चाहा । बंती स्वयं ही लुढ़क गयी । उसके होठ खुले रह गये । पूरा चेहरा खून से भर गया था ।"[1] बंती को पति के इंकार ने मारा था किसी वहशी ने नहीं ।

स्त्री जब चारों ओर से निराश्रित हो जाती है तो क्या करें । कहां जाएं ? उसके पास सिर्फ एक ही रास्ता बचता है । "हिन्दनी हो चाहे मुसलमानी, जो अपनी इज्जत लिये मर गयी वही सबसे अच्छी रही । औरत के शरीर की तो बरबादी ही है । औरत तो ढोर बकरी हैं । जो चाहे छीन ले जाये, दुश्मन की चीज समझ कर काट डाले । जाने किन कर्मों

---

1. झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 124, यशपाल

के फल से औरत का तन पाया है ।"[1]

लीग सरकार हिन्दुओं की रक्षा का दावा कर रही थी । पाकिस्तान में रह गये हिन्दू स्त्री-पुरूषों को कैंप पहुंचाने का आदेश दिया पर उसके जवान तारा को कैम्प न ले जाकर किसी मुसलमान को बेच देते हैं । जब तारा उनसे पूछती है तो जबाब में - "जवान ने उसका सिर अपने घुटनों पर दबा दिया था । तारा ने उसके घुटने पर दांत गाड़ दिये । जवानों ने तारा को चोटी से खींच कर घुटना छुड़ाया । उसका सिर मुर्गों की टोकरी में रखकर दोनों जवानों ने उसे फिर घुटनों के नीचे दबा दिया ।"[2]

✓ दिल्ली के बाहर कैम्पों में शरणार्थियों को ठहराया गया । शरणार्थी कमेटी के सदस्य व नेता जवान लड़कियों को लालच देते हैं । और यौन शोषण करते हैं । कांग्रेस के सदस्य प्रसाद - तारा को कनाट पैलेस घुमाते हैं और न चाहते हुए भी साड़ी पकड़ा देते हैं । कैम्प वाले क्या-क्या करते हैं, निहालदेई ने बताया - "एक अकेली जवान लड़की तारा ही की उम्र की आयी । कैम्प वाले उसे खूब चाय बिस्कुट खिलाते थे । जब देखो, उसे कोई बुला ले जाता ..... मैं तो देखते ही उसका ढंग पहचान गयी । हफ्ते भर में ही जाने कहां उड़ गयी । किसी ने फंसा

---

1. झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 111, यशपाल
2. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 410, यशपाल

लिया होगा ।"[1]

नेता लोग शरणार्थी पढ़ी-लिखी स्त्रियों को नौकरी का लालच देकर अपनी हवश का शिकार बनाने से नहीं चूक रहे थे । एक थे कांग्रेस के नेता अवस्थी जी, कनक के नौकरी मांगने पर बोले - "अरे आप के लिए नौकरी या काम की कमी है । आप जैसी नवयुवतियों से तो राष्ट्र निर्माण में बहुत सहायता मिलनी चाही अब तो सरकार का काम भी राष्ट्रीय काम है ।"[2] अवस्थी कनक से बात करते हुए हाथ को कनक के कंधे से छुआने से नहीं चुकते । कांग्रेस के नेताओं ने यदि कोई एक बात गांधी जी से सीखी तो वह है ..... "कांग्रेसियों ने गांधी जी से एक ही बात सीख ली है कि चाहे किसी लड़की या स्त्री के कंधे पर हाथ रख लें । तभी अपने को राष्ट्रपिता समझने लगे हैं ।"[3] ✓

अवस्थी की हरकतों से परेशान होकर कनक गिरिजा भाभी के पास जाकर नौकरी छोड़ने की बात कहती है, तब जो गिरिजा कहती हैं वह नेताओं की घटिया मानसिकता और स्त्रियों के प्रति उनके दृष्टकोण को उजागर करती हैं - "नौकरी .... क्या कहते हैं अवस्थी के बाप की

---

1. झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 139, यशपाल
2. - वही - प्रथम खण्ड, 308
3. - वही - द्वितीय खण्ड, 230

है ? तू सरकारी काम करेगी ..... क्या बिगाड़ सकता है, वह हरामी तेरा ? ..... कांग्रेस को बदनाम करते हैं । भूखे मरते थे, जेल काटते थे तभी तक भले थे । क्या कहते हैं कुर्सी पर बैठते ही दिमाग बिगड़ गये । कुत्ते को घी थोड़े ही पचता है ।"[1]

औरत के जीवन में विभाजन एक तूफान की तरह आया था जिसने उसके सामाजिक संबंधों को तहस-नहस कर दिया था, इज्जत और आबरू को मिट्टी में मिला दिया था और मानवीय मूल्यों के साथ जम कर खिलवाड़ हुआ था ।

दंगे और विभाजन

विभाजन के बाद अप्रत्याशित रूप से दंगे हुए । दंगे स्वत: ही हुए हों ऐसा नहीं था । दंगे कभी साम्प्रदायिक कारणों से हुए तो कभी उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप, कभी नेताओं की गलत व धूर्ततापूर्ण नीतियों के चलते हुए, तो कभी अंग्रेजों की साम्राज्यवादी चालों के परिणाम स्वरूप हुए और कभी गलतफहमियों के कारण हुए । उपन्यास में दंगों की भयावहता व विभीषिका का चित्रण जिस प्रकार से हुआ है लगता है जैसे पाठक के सामने सारी घटना घटित हो रही हो ।

---

1. झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 247, यशपाल

आँख मीचकर हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे पर निर्मम हमले कर रहे थे । प्रवास करते लोगों के काफिलों व गाड़ियों को कत्ल कर दिया गया - कभी गाड़ी की गाड़ी कत्ल कर दी जाती है । जिस गाड़ी से पुरी अमृतसर जाता है उस पर हमला हो जाता है । " गाड़ी के पहिये रगड़ खाकर चेचियाये और गाड़ी रूक गयी । बहुत समीप बंदूकें चलने के धमाके के साथ गाड़ी की काठ की दीवारो पर गोलियों की चोटों की आहटे हुई । तारों के पीछे बस्ती में से बर्छे, फर्सी, तलवारे और बन्दूकें लिये भीड़ गाड़ी की ओर झपट पड़ी । गाड़ी पर गोलियाँ पड़ रहीं थी । पूरी के समीप खिड़की में बैठा प्रौढ़ चीख उठा । उसके कंधे से खून बह गया ।.... सफेदपोश मुसलमान ने कातरता से गिड़गिड़ा कर प्राणों की भिक्षा के लिए तलवार उठाये जवान के घुटने पकड़ लिये । तलवार उसकी पसलियों के नीचे घुस कर उठ गयी ।"[1]

लाहौर के विभिन्न हिस्सों में लगी आग और शहालमी दरवाजे के भीतर लगी आग ने कई प्रश्न खड़े कर दिये । आग की भयंकरता इतनी थी " कि आग की लपटें ग्वाला मंडी में दिखाई दे रही है । प्राय: मील भर दूर है पर ग्वाला मण्डी में भी भयंकर धुआंध और हवा में भी गरमी आ रही है । आग की लपटों से आकाश में उड़े हुए चिथड़े या कागजों के टुकड़े राख बन कर गिरने से ग्वाला मण्डी के छतें भर गयी है ।"[2] प्रश्न

---

1. झूठा सच - प्रथमखण्ड, 388- यशपाल
2. वही 254 वही

यह है कि आग कैसे लगी "नैयर" कहता है कि पास में फायर ब्रिगेड स्टेशन है बुझादी होती । पर प्रश्न सामान्य आग का नहीं था जो बुझ जाती । मिर्जा कहता है -" अरे भाई जब दिलों में इतनी आग है तो आग नहीं लगेगी तो क्या होगा ? हिन्दू को मुसलमान और मुसलमान हिन्दू को नेस्तनाबूद कर देना चाहता है तो क्या नहीं होगा ?"[3] आग लगाने वाले और दंगा करने वाले क्या यह नहीं जानते कि किसी बेगुनाह का घर भी जलता है । पर उनका मकसद भी तो यही होता है । तारा के शब्दों में -" उन्हें तो मतलब है, कोई घर जले । उन्हें तो कुछ जलाने से मतलब ।" आतंक फैलाने और बदले केभाव ने हर किसी को बेलगाम छोड़ दिया ।

मुसलमानों का जबाब रतन, मेवाराम, बीरसिंह और टीका राम रात भर पलीते तीरों में बांध कर देते हैं । रतन अपने वर्ग की रक्षा के लिए अपने मामा राम ज्वाया के साथ मिलकर हथियार मगवाते हैं । जिसे देखकर पुरी बोल पड़ता है -" मेरे भाप्पा, इस तरह बढ़ाने से तो कभी अंत नहीं होगा । हथियार वे लोग भी खरीद सकते हैं । रहना तो अगल-बगल पड़ोस में ही है । .... जहर फैलाने वालों ने तो जहर फैला दिया । आदमी जहर खा ले तो इलाज कराना चाहिए या उसे गोली मार देना ठीक होगा ।"[4]

---

1. झूठा सच - प्रथम खण्ड, 254
2. वही वही 140

रतन दोलू मामा के खून का बदला किसी मुसलमान को मार कर लेता है और खुशी से पुरी को खबर देता है । पुरी सुनकर बोलता है - कई दूसरे दोलू मामा मार डाले होंगे, यह तो नहीं मालूम था कि दोलू मामा को किसने मारा था ? अब वे लोग बदला लेने आयेंगे - दोलू मामा जैसे मामें भाजे, फज्जे तो पाकिस्तान नहीं बना रहे हैं ।"[1] यह बदले का सिलसिला थमता नहीं है ।

दिल्ली के साम्प्रदायिक दंगों से आतंकित सैयद पाकिस्तान जाने के लिए तैयार हो जाता है, यह देख कर पंडित गिरधारी लाल लीग सरकार की एक पक्षीयता के बारे में बोलते हैं --"सैयद साहब, इन्सान दरिंदे बन गये हैं । हू-बहू यही सूरत लाहोर में थी । 21 अगस्त को नंगी तलवारें परसे, भाले लेकर जलूस निकला ओफ ! भाई साहब, यहाँ तो फिर भी गनीमत है, सरकार फिसाद करने वालों को सजा दे रही है, अमन के लिए कोशिश कर रही है । वहां तो हिन्दुओं के हथियार सरकार ने ही ले लिये थे । और मुसलमान खुलेआम हथियार लिये फिर रहे थें । वही बीमारी यहां आ गयी है ।"[2] सरकारी मशीनरी कितनी एक पक्षीय थी और मजिस्ट्रेट कितने उचित थे ? "शहालमी दरवाजे पर एक हिन्दू लड़के ने मजिस्ट्रेट चीमा के पक्षपात से चिढ़

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 129, यशपाल
2. - वही - द्वितीय खण्ड, 45

कर गोली चला दी थी । सब लोग जानते हैं, अफ़सर निस्संकोच अपने-अपने सम्प्रदाय का पक्षपात कर रहे हैं । मजिस्ट्रेट ने लड़के को तो वहीं गोलियों से छिदवा दिया और रात को अपने शहालमी के बाजार में, हिन्दुओं की दुकानों के किवाड़ तुड़वा दिये । मिट्टी के तेल के कनस्तर छिड़कवा कर आग लगवा दी । उस भाग में मुसलमानों की दुकाने कम थी । जो लोग आग बुझाने आये उन पर कर्फ़्यू में निकलने के अपराध में गोली चला कर उन्हें मार दिया गया ।"[1]

दंगा-फ़साद और हत्या करवाके राजनीतिक स्वार्थ भी कम नहीं हुआ । एक भोला-भाला दौलू मामा जिसे सभी हिन्दू और मुसलमान प्यार से मामा कह कर पुकारते वह भी राजनीतिक स्वार्थ की बलि चढ़ जाता है । मामा जब तुम से ख़ुदा तुम्हारे कातिल का नाम पूछेगा तो तुम्हारी उंगली किस की तरफ उठेगी ? क्या ख़ुदा नहीं जानता कि तुम्हारे कत्ल के लिए उत्तेजना दिलाने की जिम्मेदारी उन नेताओं पर है जो तुम्हारे जैसे इंसानों को शासन के सिंहासन पर पहुंच सकने का जीना बनाने के लिए जनता का ईंट गारे की तरह प्रयोग करना चाहते हैं ।"[2] दौलू मामा जैसे न जाने कितने मामा बलि हुए । गौस पुरी से कहता है - "भिस्ती की गली में सब घर मुसलमानों के । बसीत के चारों तरफ दस बारह घर मुसलमानों के

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 255-56
2. - वही - 114

ही हैं .... हिन्दुओं ने जहाज से बम फेंक दिया । कोई जिन्न आकर बम फेंक गया । जाहिलों ने कत्ल कर दिया गरीब पूर्विया मोची का । ... वह साला तुम्हारा पाकिस्तान छीन रहा था ।"[1]

गांधी जी को मुसलमानों का हमदर्द और उनके साथ रियायत बर्तने वाला समझा जाना उनके प्रति अन्याय होगा । गांधी जी सत्ता प्राप्त करने वाली राजनीति से ऊपर थे । वे न धर्म और न अर्थ के आधार पर भेदभाव कर सकते थे । उनके लिए कुरान और रामायण एक थी और अखण्ड भारत उनका आदर्श स्वप्न था । वे आदर्शवादी थे - "गांधी जी इज इण्डियाज सोल । प्रसाद उग्रता से बोले शासन एक बात है, गांधी जी की दूसरी बात है । सब गांधी थोड़े ही हो सकते हैं ।"[2] पर गलतफहमी से सामान्य जनता दंगों के लिए गांधी का नाम लेने लगती है ।

दंगा रोकने के लिए गांधी जी अनसन करते हैं, प्रार्थना करते हैं और सर्वधर्म सद्भाव के विचार से कुरान की आयते पढ़ते हैं । इस पर गांधी जी के विरुद्ध नारे व जुलूस निकलते हैं । पाकिस्तान से आये हिन्दू उत्तेजित होकर "गांधी जी को मर जाने" दो के नारे लगाने लगते हैं । वे कुरान की आयते सुनकर व गांधी जी के यह कहने पर कि "भगवान पर विश्वास ही सहारा दे सकता है" उबल पड़ते हैं । "हम कुरान की आयतें

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 128, यशपाल
2. - वही - द्वितीय खण्ड, 176, यशपाल

हरगिज नहीं सुनेंगे । इन आयतों को पढ़ कर हमारे हजारों भाइयों का कत्ल हुआ । इन आयतों को पढ़ने वालों ने हमारी माँ बहनों पर बलात्कार किया है । ..... आप यह आयते सुनाकर हमारे भाइयों और बच्चों के कत्ल और हमारी माँ-बहनों की बेइज्जती की याद दिला रहे हैं ।"[1]

गांधी जी की दिल्ली से जो मुसलमान भय के कारण भाग गये हैं उनको वापस आने व मस्जिदों व उनके कब्जे किये मकानों पर उनका हक दिलाने की बात से हिन्दू व सिख उबल पड़ते हैं । पर जब वे 13 जनवरी 48 को पाक को बिना शर्त पावना देने के लिए अनशन करने की घोषणा करते हैं, तब देश के सभी हलकों में हलचल हो जाती है, भंयकर प्रतिक्रिया होती है । रावत चौबिस वर्ष के शासकीय अनुभव के आधार पर बोला - "गांधी जी के अनसन के कारण मंत्रिमंडल का निश्चय बदल देने से सरकार ने अपनी साख पाकिस्तान के संबंध में और शासन व्यवस्था के संबंध में गिरा दी है ।"[2] नरोत्तम चिंता के स्वर में बोला - बड़ी कठिन स्थिति है । गांधी का अनशन कैबिनेट के निर्णय के विरुद्ध है । जनता तो कैबिनेट के साथ है । गांधी जी का अनशन निश्चय ही भारत के विरुद्ध, पाकिस्तान के पक्ष में है ।"[3] यह अनशन तारा की दृष्टि में भी अनुचित था । "गांधी जी को अनशन करना था तो पार्टीशन रोकने के लिए करना चाहिए था । असली घटना

---

1. झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 76, यशपाल
2. - वही - 191
3. - वही - 175

तो हो चुकी । यह तो केवल उस घटना की छाया है ।"[1]

गांधी जी को मुसलमान समर्थक केवल पाक से आये हिन्दू ही नहीं अपितु सामान्य जन गांधी जी की नाइंसाफी समझते हैं । जब गांधी जी कूवा चेला के शेष रह गये मुसलमानों के प्रति सहानुभूति प्रकट करने और उन्हें आश्वासन देने के लिए आया सुनकर तांगे वाला उबल पड़ा - "यह ..... नहीं जीने देगा हिन्दुओं को ।"[2] तारा को लगता है - "गांधी जी ने मुसलमानों की सहायता के लिए अपने उपवास से हिन्दुओं पर आक्रमण कर दिया है । हिन्दू पराजय स्वीकार करके आत्महत्या कर ले .... लोगों को नेहरू और मौलाना आजाद पर भरोसा नहीं है, किंतु सरदार पटेल, श्यामा प्रसाद मुखर्जी और सरदार बलदेव सिंह यह नहीं होने देंगे ।"[3]

पाकिस्तान में हिन्दुओं पर किये जा रहे हमले की खबर हिन्दुओं में बदले की भावना भर देती है । ऐसे में गांधी जी द्वारा पाक को पावना दिया जाने की घोषणा आम नागरिक को उद्वेलित ही नहीं करती है अपितु गांधी जी के निर्णय के विरुद्ध भी हो जाती है । गांधी जी की अवधारणा सामान्य जन से बहुत ऊँची होती है । वे गांधी के विरोध में नारे लगाने लगते हैं, तब नेहरू उत्तेजित होकर कहते हैं - "गांधी इस देश की आत्मा हैं,

---

1. झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 175, यशपाल
2. - वही - 63
3. - वही - 175

मुल्क की रूह है । गांधी के मरने के साथ हम आप पूरा मुल्क मर जायेगा । दुनिया क्या कहेगी ।"[1] गांधी जी के प्रति असीम श्रद्धा आम जनता के मन में गहरे तक पैठी होने के कारण गांधी जी का विरोध बंद तो हो जाता है, पर कट्टर व उग्रवादी हिन्दू गांधी को हमेशा के लिए समाप्त कर देते हैं । गांधी जी ने साम्प्रदायिक दंगों को रोकने के लिए अंतिम समय तक प्राणपण से जुटे रहे और उन्हें सफलता भी कम नहीं मिली थी ।

शरणार्थी समस्या और देश का भविष्य

देश भक्तों के संघर्ष, लगन और जेल की कठिन यातनाओं के बाद अधूरी और अपंग आजादी मिली । अखण्ड हिंदुस्तान के स्थान पर नक्शे में दो राष्ट्रों का उदय हुआ, इसी के साथ आजादी की मिठास में खटास का आरम्भ हुआ । सीमा पर नवोदित पाकिस्तान से गैर मुस्लिमों के लुंज-पुंज काफिले आने लगे । राष्ट्र भक्ति से ओत-प्रोत पुरी जैसे नवयुवकों का दृष्टिकोण सत्ता और कुर्सी प्रेम में परिवर्तित हुआ, जिससे लोकतंत्र की शुद्धता नयी समस्या के रूप में देश के सामने उभर कर आयी ।

---

1. झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 177, यशपाल

जो लोग विभाजन के बाद भी वहीं रहने का मन बना चुके थे, जहां वे पहले रह रहे थे, क्योंकि वे अपने वतन से प्रेम करते थे, अपने पड़ोसी से प्रेम करते थे और उस मिट्टी से जिस पर उनका जन्म हुआ था । उनको उस समय घोर दुःख और आश्चर्य हुआ जब - "सरकार ने सभी स्तरों के सरकारी कर्मचारियों को सूचना दे दी थी कि वे अपनी इच्छानुसार भविष्य में हिन्दुस्तान या पाकिस्तान में रहने और काम करने का निर्णय कर सकते हैं और अपना परिवर्तन करवा सकते हैं । इस घोषणा का अर्थ सर्वसाधारण ने समझा कि सरकार पाकिस्तान में हिन्दू अफसरों की और हिन्दुस्तान में मुसलमान अफसरों की सुरक्षा की जिम्मेवारी नहीं ले सकती थीं । ऐसी अवस्था में साधारण लोग किसका भरोसा कर सकते थे ?"[1] सरकारी घोषणा से जन सामान्य में असुरक्षा का भाव जन्मा और बचा हुआ साहस व्यावसायिक भेदभाव ने खत्म कर दिया । "टैक्स्ट बुक कमेटी के मुसलमान मेम्बरों को मुसलमान पब्लिशर्स का खयाल है । वे लोग हिन्दू पब्लिशर्स को किताबें हटा-हटा कर मुसलमान पब्लिशर्स को देते जा रहे है । .... पहले एक भी मुसलमान पब्लिशर्स नहीं था । अब तो तमाम ट्रेड उन्हीं लोगों के हाथों में जा रहा है । ट्रेड क्या मुल्क ही उन लोगों के हाथ में जा रहा है । हम तो लाहौर में अपना काम बंद कर रहे हैं ।"[2]

---

1. झूठा सच, प्रथम खण्ड, 281, यशपाल
2. - वही - 279

जब कुछ लोगों ने देखा कि सहधर्मी धीरे-धीरे वतन छोड़ रहे हैं, तो वे भी जाने के लिए तैयारी करने लगे । बुढ़िया कह रही थी - "बंशी बेटा, तुम लोगों से डर नहीं हैं पर आस-पास से अपने दीन बिरादरी के लोग चले गये हैं तो हम लोग क्या बैठे रहें । बताओ तुम उमर की गली के लोगों को कब तक रोकोगे ? कल शाम शादी लाल ने, रब्ब उसको सुमति दे, बाजार में तेरे ताऊ को धमकी दे दी कि चौबिस घंटे में गली से निकल जाओ ।"[1] कुछ लोगों की धमकी ने चंद लोगों के प्रेम और स्नेह को दबा दिया । फिर भी लोग टिके हुए थे । पर उनका धैर्य उस समय जवाब दे जाता है जब उनका प्रभावशाली नेता व मुखिया भी वतन छोड़ने का निर्णय कर लेता है । "मौलवी कासिम के चले जाने के बाद, गलियों में गरीब मुसलमान सैयद की ही और आँखे लगाये थे । सैयद मुसलमानों के दिल्ली छोड़ जाने के खिलाफ थे । ..... किंतु जब दुर्रानी गली में शेष रह गये मुसलमानों ने सैयद को चुपचाप मकान छोड़ कर चले जाते देखा तो उनका साहस टूट गया । सब भागने लगे ।"[2]

शरणार्थी कैम्प में बसाने के लिए स्वयं सेवक छुटे हुए होते हैं, उनको कर्फ्यू में भी छूट होती है, पर वे सुरक्षित नहीं थे । स्वयं सेवक लापता हो रहे थे । सिखों के साथ ऐसा चिन्हों को देखकर हुआ । बीर सिंह जब शाम

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 224, यशपाल
2. - वही - द्वितीय खण्ड, 60, यशपाल

तक नहीं लौटा तो रतन और मेवाराम ने कहा - हम लोग उसे कई दिनों से समझा रहे थे कि तेरा गली से बाहर जाना ठीक नहीं है। हमें उसके साथ जाते हुए खुद डर लगता था। हम लोगों को तो कोई जान पहचान का आदमी कह सकता है कि हिन्दू है। सिख को पहचानने में क्या लगता है।"[1]

सिक्खों को दुश्मन बनाने के पीछे अवसरवादी नेताओं का हाथ था। पुरी झुंझला कर बोला - "मास्टर तारा सिंह तलवार की धमकी देकर खुद तो लाहौर से भाग गये और यहां मुसलमानों की नजरों में सिक्खों को बैरी बना गये।"[2]

पलायन करते काफिलों पर नृशंस हमले हुए। किसी काफिले में एक व्यक्ति भी जिंदा नहीं बच पाया और जो बचे वे जीते जी मर चुके थे। "कतरी हुई और उलझी हुई दाढ़ियों, दबी हुई टोपियों, रस्सी की तरह लपेटी हुई मैली पगड़ियों में से झांकते मुड़े हुए सिर, काले, नीले, घीथड़े-कपड़े स्त्री-पुरुषों के चेहरे आसुओं और पसीने जमी गर्द से ढ़के हुए, कमरें झुकी हुई, घिसटते-लंगड़ाते कदम .... उबकाई पैदा करने वाली भंयकर गंध .... मानों वे शरीर चलते-फिरते भी सड़ते-गलते जा रहे थे।"[3] वह भीड़ जो पाकिस्तान की तरफ सरक रही थी जिसका आत्मविश्वास भी मर चुका था। "कोई व्यक्ति अपनी घोड़ी को लगाम से खींचकर ले

---

1. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 291
2. - वही -
3. - वही - 441

जा रहा था । भूख से दुर्बल घोड़ी सवारी के अयोग्य थी । सड़क के किनारे के खेत से एक जाट काफिले में घुस आया । घोड़ी की लगाम मालिक के हाथ से झपट कर घोड़ी को खेत में खींच ले गया । काफिले के साथ हजारों आदमियों में कोई विरोध न कर सका । न्याय, अधिकार और औचित्य का कोई प्रश्न नहीं था ।"[1]

जिंदा व मुर्दा लाशों से लदी रेल गाड़ी दोनों तरफ से आ-जा रही थी । पुरी जिस गाड़ी में सवार था, उस गाड़ी में मुसलमानों की भीड़ इतनी थी कि पैर रखने को जगह नहीं थी ऐसे में जालंधर स्टेशन पर गाड़ी की तरफ भीड़ को लपका देख कर अंदर बैठे मुसलमान भी अन्य मुसलमानों को आने से मना कर रहे थे । उस गाड़ी में जब एक हिन्दू ने पुरी को हिन्दू समझ कर जगह दी और मुसलमान के लिए जगह नहीं देता देखा तो सुना "कि तुम्हारे लिए पाकिस्तान में बहुत जगह है" तो वह बोला - "यह है आप लोगों का रवैया दिलों में इतना निपाक है और तकसीम का इल्जाम मुसलमान पर रखते हैं ।"[2]

मकानों, दुकानों और मशीनों पर मौका मिलते ही कब्जा कर लिया गया । नैयर की माडल टाउन की कोठी व पुरानी अनारकली की तिलक गली के दोनों मकानों पर पूर्व से गये मुसलमानों ने कब्जा कर लिया

---

1. झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 19, यशपाल
2. झूठा-सच, प्रथम खण्ड, 384, यशपाल

तो दूसरी तरफ हिन्दू शरणार्थियों ने पंडित गिरधारी लाल के लम्बे-चौड़े मकान पर धावा बोल दिया । जब वे मकान को खरीदा हुआ कहते हैं तो वे दरवाजे पर लिखा मुसलमान का नाम दिखा कर कहते हैं "मकान तुम्हारे बाप का है ।" गांधी जी के आह्वान पर कुछ मुसलमान लौट आते हैं और अपने मकानों पर रहने का दावा करते हैं । सैयद बिके हुए मकान पर अपना दावा करता है, खाली न करने पर गांधी जी से अपील करता है । पंडित जी गांधी जी का वक्तव्य देख कर सन्न रह जाते हैं - "इस देश को भय से छोड़कर जाने वाले मुसलमानों को भारत-सरकार ने आश्वासन दिया है कि वे लोग चाहें तो लौट कर अपने मकानों में बस सकते हैं ··· भारत सरकार की प्रजा बनकर । ··· हिन्दुओं की भीड़ ने पुलिस को उचित कार्रवाई नहीं करने दी । किसी भी सरकार के लिए यह बहुत शरम की बात है । ···· दुर्रानी गली का मकान उसके मालिक को जरूर मिले ।"[1] पंडित जी को सैयद के फरेब पर गुस्सा आया और गांधी जी पर भी क्रोध आया कि बिना दूसरे पक्ष को सुने ही वक्तव्य दे दिया । पाकिस्तान से आया रिखीराम सूद को दी गई मुसलमान की प्रेस पर अपना दावा करता है । उसका तर्क है कि वह भी जेहलम में अपनी मशीन छोड़कर आया है । सभी पंजाबियों का तकाजा था - "भारत के सभी प्रदेशों - बम्बई, मद्रास, बंगाल, यू·पी· सभी स्थानों से मुसलमानों

1· झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 87, यशपाल

को निकाल दिया जाना चाहिए । सब मुसलमानों की जमीन, जायदाद, कारोबार पर पंजाब से आये लोगों का अधिकार होना चाहिए या उन्हें मौका दिया जाये, हमारा जो नुकसान हुआ है, हम भी तो उसे पूरा कर सकें ।"[1] उनके लिए ला एण्ड आर्डर का कोई मायना नहीं रह गया, क्योंकि वे भुक्तभोगी थे ।

शरणार्थियों की बड़ी तादात के कारण आवास की समुचित व्यवस्था नहीं हो पा रही थी । फलत: उन्होंने पुराने खण्डहरों को रहने योग्य बनाया और समस्या से जूझते रहे । ऐसे में गांधी जी का वक्तव्य सुनकर "सरदार" का संचालक व मालिक उत्तेजित हो जाता है - "इस समय हजारों रिफ्यूजी मसजिदों, मकबरों में, मसजिदों में क्या पुराने किले के खण्डहरों में भी जहां गीदड़ और चमगादड़ भरे रहते थे, सिर छिपाये हैं । गरीबों ने कब्रें उखाड़-उखाड़ कर किसी तरह सिर पर साया बनाया है । गांधी कहता है, मसजिदों-मकबरों से सबको निकाल दो । लोगों की जान बचाना जरूरी है कि उजाड़ खाली पड़ी मसजिदों को सिजदा करना जरूरी है ?"[2]

शरणार्थियों की आवश्यकताओं को पूरा करने वाली कांग्रेसी सरकार के दावे उस समय खोखले साबित होते हैं, जब नेहरू जी कैम्प दौरे पर आते

---

1. झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 46, यशपाल
2. - वही - 82

हैं । एक नल की जगह दूसरा नल लगाने का आश्वासन दिया जाता है । नंगे लड़के को देख कर तुरंत नया कपड़ा आता है । चूंकि नेहरू को बच्चे अधिक पसंद हैं इसलिए साफ सुथरे कपड़ों में बच्चों का अगली कतार में होना आवश्यक है । सब तैयारी हो जाती है । देश के सबसे बड़े वजीर आते हैं । "प्रधानमंत्री जरा ठिठके । झुक कर दयाल और धम्मो की मुन्नी के सिर पर हाथ फेरा और पीछे चलते लोगों से पूछ लिया - "बच्चों को दूध मिलता है ।" पीछे चलते लोगों की आँखें आपस में मिलीं । प्रसाद जी और डिप्टी कमिश्नर ने तुरंत एक साथ उत्तर दिया - "यस सर ! जी हाँ ।"[1]

कांग्रेस गांधी जी के नाम का जाप तो बड़े भक्ति भाव से करती हैं पर करते सब अपने मन की हैं । गांधी जी जो कहते हैं वैसा करना कांग्रेस के शायद बूते में भी नहीं था । नरोत्तम कहता है - "गांधी जी ने कहा था, शरणार्थियों के लिए स्थान नहीं है तो उन्हें वायसराय के महल और मिनिस्टरों के बंगलों में स्थान दिया जाना चाहिए ।"[2]

नेता लोग नेतागिरी करने के अवसर कम नहीं ढूंढते, वे शरणार्थियों में भी राजनीति चलाने का बहाना खोज लेते हैं । शरणार्थी कैम्प में रहने वाले लोग अपने रोजगार में लग चुके थे पर मुफ्त के खाने को नहीं छोड़ना चाहते थे । वे न तो कैम्प ही छोड़ना चाहते हैं और न ही दिल्ली से

---

1. झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 154, यशपाल
2. - वही - 169

बाहर जाना चाहते हैं । जब किंग्सवे कैम्प और देश भर के दस लाख शरणार्थियों से भरे कैम्पों को समाप्त करने की घोषणा होती है तो सत्ता व कुर्सी की राजनीति करने वाले विरोध करते हैं फिर विरोध का हथियार गांधी जी ने दे ही दिया था । एक पुरानी कांग्रेसी समाज सेविका ने अनशन आरम्भ कर दिया । "महिला की मांग थी कि कैम्पों को भंग करने की तिथि स्थगित की जाये और कैम्पों को भंग करने के पूर्व कैम्पों में काम करने वाले सैकड़ों कर्मचारियों और इस विभाग में नौकरी पाये लोगों को अन्यत्र नौकरियां दी जाये ।"[1]

आजादी की कल्पना में देश के भविष्य की जो तस्वीर बनी वह सच होने के स्थान पर झूठ साबित हुई । बहुत कुछ टूटने-बिखरने के बाद भी टूटन व अलगाव बढ़ता रहा । भारत आजाद हुआ । चुनाव हुए । अपनी सरकार बनी । राजनीतिक उद्देश्य व सामाजिक ढांचे में परिवर्तन हुआ । देश के लिए कुर्बानी देने वाले नेताओं के स्थान पर सफेद पोश वर्ग ने जन्म लिया । जो कुर्सी व सत्ता की राजनीति करने लगा ।

विभाजन से सामाजिक क्षेत्र में बड़ी उथल-पुथल हुई, खून खराबा हुआ, बहुत कुछ टूटा पर जुड़ाव जैसी बात भी हुई । सामाजिक परम्परा की बेड़ियों की जकड़न कुछ ढ़ीली हुई । "विभाजन से पहले मैं नौकरी कर

---

1. झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 301, यशपाल

लेने की कल्पना करती थी तो खास साहस की आवश्यकता जान पड़ती थी पर अब तो साधारण बात है । .... सरोज कहती है , अब तो लड़कियां ही ढूंढ लें ! ..... हजारों जवान लड़कियों के घर वाले अब यही चाहते होंगे । छः बरस पहले ऐसी बात सुनकर लोग कान में उंगली दे लेते । विभाजन से बहुत ध्वंस हुआ परंतु समाज को जकड़े-दबाये रखने वाली मजबूत परतें भी ऐसे टूट गयी हैं जैसे जेल में बंद लोगों को भूडोल में जेल की दीवारें गिरने से बहुत लोगों को चोटें तो लगे परंतु बंद लोग स्वतंत्र हो जाएं ।"[1]

विभाजन के ध्वंस के बाद निर्माण से अधिक समस्याएं सुरसा के मुंह की तरह बढती चली गई । जनसंख्या का दबाव अनावश्यक रूप से बढ़ने लगा ।" बंटवारे के पूर्व जालंधर पचास-साठ हजार की आबादी का उपेक्षित सा नगर था । तीन बरस में जालंधर की जनसंख्या तीस लाख से भी बढ़ गयी थी । पश्चिम पंजाब के कस्बों और नगरों से आये हिन्दू दुकानदार दुकानदारी ही करना जानते थे । .... गलियां बाजार बनती जा रही थी । मकानों की समस्या विकट से विकटतर होतीजा रही थी ।"[2] यही हाल अन्य शहरों का होता जा रहा था । जनसंख्या से जुड़ी समस्या है बेरोजगारी ।

---

1. झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 523, यशपाल
2. झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 359, यशपाल

स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने वाला पुरी स्वतंत्र भारत में नौकरी के लिए भटकता है और निराश होकर कनक से कहता है । "गली में सब लोगों को कहकर आया था ····· नैनीताल नौकरी के लिए बुलाया है । अब जाकर क्या मुंह दिखाऊंगा ! उसने देश की स्वतंत्रता के लिए प्राणों की बाजी लगा दी, अपने लिए कुछ न चाहा था किंतु ···· देश की स्वतंत्रता मुझे जीविका देने का भी उत्तरदायित्व नहीं लेना चाहती ···· रात कूद-कूद कर नाचने-गाने वाले पहाड़ी लोग क्या आशा कर रहे हैं ? रात स्वतन्त्र हो जाने के बाद वे आज फिर रिक्शा में जुत गये होंगे ।"[1]

अपना प्रभाव बनाने व स्थापित करने के लिए राजनीति करने वाले छुट भैया नेता कुकरमुत्तों की तरह उगने लगे । पंजाब पर अंग्रेजों के समय में फारसी और उर्दू थोप दी गई थी । पर अब स्वतंत्र देश में पंजाब को अपनी भाषा अपनाने का पूरा अधिकार था । पुरी पंजाब में हिन्दी लागू करने का हिमायती था और उसने कुछ लेख भी लिखे थे । पर अवसर-वादी नेता अपना प्रभाव क्षेत्र बनाने में लगे थे । मास्टर तारा सिंह जो लाहौर में अखण्ड भारत के लिए तलवार खींच रहे थे वे "पंजाबी में खालसा राज बनाने की मांग उठा रहे थे । ··· वे पंजाबी बोलते थे, पंजाबी बोली में ही पंजाबी को न सहने के लिए हुंकारते थे ।"[2]

1· झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 382, यशपाल

2· - वही - 363

योग्य नेताओं के अभाव में ब्यूरोक्रेसी निरंकुश रूप ग्रहण करने लगी थीं । सरकार की योजना सफेद हाथी के सिवा कुछ न थी । माथुर कहता है - "सरकारी रिपोर्टों में उत्पादन बढ़ता है और बाजारों में मंहगाई । हमें तो योजनाओं से बनता दिखाई नहीं देता । जनता का अरबों रुपया करोड़पतियों और सरकारी अफसरों की जेबों में चला जा रहा है । भाखड़ा नांगल जाकर तमाशा देख लो । जनता के खर्च पर इतना सीमेंट खरीदा गया गया है कि भाखड़ा के पचास-साठ मील चारों ओर सब मकान सीमेंट के बन गये हैं ।" अब "सीमेंट फैक्टरियां की चांदी है, ठेकेदारों की चांदी है, सरकारी अफसरों की चांदी है । बरबादी टैक्स देने वालों की है । सीमेंट की जगह रेत भरी जा रही है । चवन्नी की जगह रुपये का एस्टीमेट बनता है । फिर उस चवन्नी में से भी तीन आने खा जाना चाहते हैं ।"[1]

कांग्रेसी नेता गांधी के पद चिन्हों पर चल कर उनके एक आह्वान पर बन्दूक के आगे सीना खोलकर खड़े हो जाते थे वही नेता अब - "गांधी जी की जय पुकार कर कांग्रेस के लिए बोट मांगे जाते हैं किन्तु गांधी जी के सिद्धांत और नीति शासन में या कांग्रेस के व्यवहार में कहां ? गांधी जी को तो केवल राजघाट में समेट दिया गया है ।"[2]

देश की चिंता होने के स्थान पर अपनी चिंता कितनी तीव्र होती है और कितना जल्दी समाधान कर लेते हैं - नेता । नरोत्तम के शब्दों में - {"ईमानदार है कौन ? क्या कानून बनाने वाले विधान सभा के मेम्बर ईमानदार है ?} - "गांव के एम॰एल॰ए॰ आंदोलन में जेल जरूर गये थे ।

---

1. झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 560, यशपाल
2. - वही - 612

चौदह बीघे जमीन और छोटा, पुराना गिरा हुआ मकान था ··· कर्ज लेकर कांग्रेस टिकट पर इलेक्शन लड़ गये ····दो मकान पक्के खड़े कर लिये हैं और साठ बीघे खेतों के मालिक हैं । थानेदार से आठ आने का हिस्सा है ।"[1]

नेता जी को योजना लागू करके देश के विकास करने से अधिक जनता में अपनी छवि और स्थिति की चिंता कई ज्यादा है । सूद डा॰प्राणनाथ से कहता है - "मान लिया इस योजना से बहुत शीघ्र औद्योगिक विकास हो सकता है, पर योजना को कार्यान्वित कौन करेगा ? योजना की कार्यान्वित करने के लिए सबसे पहले मजबूत सरकार की जरूरत है । यह योजना तो बहुत अच्छी है, लेकिन यदि नये चुनाव के परिणाम में कोई दूसरी प्रतिक्रियावादी सरकार बन जाये और वह इस योजना को अव्यावहारिक बना कर रद्द कर दे तो ? ···· कांग्रेस जनता के सबसे महत्वपूर्ण अंग का विश्वास और सहयोग खो बैठेगी । ···· योजना कांग्रेस के लिए आत्महत्या बन जायेगी ।"[2] एक कर्मठ अफसर की सलाह को सूद एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकाल देता है और सलाह देता है । --"तुम तो अर्थशास्त्र के विद्वान हो खोज और अध्ययन तुम्हारा विषय है । तुम खामखाह इस झगड़े में समय बरबाद कर रहे हो । यह तो मामूली सेक्रेटरियों के काम हैं । तुम्हारे लिए उचित

1· झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 560, यशपाल

2· - वही - 576

स्थान "राष्ट्रीय खोज संस्था में है" तनख्वाह भी यहां से अच्छी हो जायेगी ।"[1]

देश के लिए संघर्ष करने वाले दर-दर की ठोकर खाने के लिए मजबूर उनके लिए कोई अवसर नहीं रह जाता । कम्युनिस्ट दौलत राम आजाद देश के लिए जेल में रहा । कनक के कहने पर पुरी उसे सूद से कहकर एक टन टीन की चादर का कोटा दिला दिया पर जब सूद को पता चला कि "मठानी का सिंधियों में बहुत प्रभाव है । आजाद का काम तो फिर भी हो सकता है ।"[2] तो वह कोटा मठानी के नाम कर देता है ।

वह पुरी जो प्रगतिवादी हुआ करता था एम॰एल॰ए॰ बनने के बाद उसके चरित्र का राजनीतिकरण बड़ी तीव्रता से होता है । बेला सिंह की जमीन पर दसौदा सिंह जोड़ तोड़ करके कब्जा कर लेता है । जब वह न्याय के लिए अपने क्षेत्र के सदस्य पुरी के पास जाता है तो पुरी कहता है - "किसी के घर में घुस कर बैठ जाना सत्याग्रह नहीं है । दूसरे के मकान में बेजा घुस जाना जुर्म है । तुम अपना डेरा-डण्डा उठाकर यहां से चले जाओ ।"[3] और उसे पुलिस जबरदस्ती उठाकर ले जाती है । शिमला में पुरी विधान सभा में जाता है । जब उसे स्त्री संसर्ग की कामना होती है तो वह उर्मिला को ढूंढता है । "उसका रोम-रोम उर्मिला के आकर्षण के आवेग से थरथरा रहा था । उसे उर्मिला की उजली-भूरी आंखों में भी

1॰ झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 577, यशपाल
2॰ - वही - 371
3॰ - वही - 474

अपनी इच्छा की प्रतिच्छाया दिखायी दे रही थी ।"[1] कनक से प्रेम करते-करते पुरी शादी के अटूट बंधन में बंध तो जाता है, पर उनका वैवाहिक जीवन वैचारिक मतभेदों के कारण छिन्न-भिन्न हो जाता है । पति से वैचारिक असाम्य होने से कनक तलाक चाहती है पर पुरी अपनी राजनीतिक स्वच्छता एवं पुरूष ग्रंथि के चलते उसे बांधे रखना चाहता है । किंतु जब उसे पता लगता है कि कनक उससे स्वतंत्रता चाहती है तो वह उसे परेशान करने की सोचता है । "मेरे पास कानूनी आधार हैं, पर तलाक नहीं दूंगा । .... मैं उसकी सब चाल बाजी समझता हूँ । ... मुझे इस संबंध से कुछ नहीं मिल रहा है, परंतु मैं उसे दूसरे विवाह का अवसर नहीं दूंगा । तलाक नहीं दूंगा । यदि वह कुछ करेगी तो पत्नी नहीं बन सकेगी ।"[2] पुरी का पतन होता चला जाता है । वह अपनी बहन तारा को भी राजनीति का मोहरा बनाने से नहीं चूकता । तारा के प्रति पुरी के विचार जानकर कनक की निगाह से वह गिरता चला जाता है । सूद और पुरी मिलकर तारा और प्राणनाथ को बदनाम करते हैं । सोमराज जैसे आदमी से सांठगांठ करने से नहीं चूकता है । "नाजिर" को वे कांग्रेस की नीतियों का मुख पृष्ठ बना देता है ।

सूद और पुरी के विरुद्ध जनमत बनने लगता है । सूद की तानाशाही से त्रस्त जनता नौकरशाही व कुछ कांग्रेसी भी विरोध में मत डालते हैं । जनता

---

1. झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, 477, यशपाल
2. - वही - 606

का असंतोष चरम पर पहुंच जाता है । बच्चे नारा लगा रहे थे - "गली-गली में शोर है, सूद पुरी चोर है ।" जनता का विरोध रंग लाता है । सूद जी सत्रह हजार वोटों से हार जाते हैं । लोकतन्त्र में विश्वास जताते हुए प्राणनाथ कहते हैं - "गिल अब तो विश्वास करोगे जनता निर्जीव नहीं है । जनता सदा मूक भी नहीं रहती । "देश का भविष्य" नेताओं और मंत्रियों की मुठ्ठी में नहीं है देश की जनता के ही हाथ में है ।"[1] यदि जनता का प्रतिनिधि जनता के भाव को नहीं समझेगा तो जनता उसे सत्ता च्युत कर देगी । लोकतन्त्र में आशा और विश्वास व्यक्त करता हुआ उपन्यास समाप्त हो जाता है ।

---

1. झूठा-सच द्वितीय खण्ड, 616, यशपाल

तीसरा अध्याय

झूठा सच और आलोचक

झूठा-सच और आलोचक

मार्क्सवादी पक्षधरता के चलते यशपाल का साहित्य आलोचकों के बीच विवाद का विषय रहा है। पक्षधरता साहित्य को कमजोर बनाती है पर एक सीमा तक वह साहित्य को बल भी प्रदान करती है। यशपाल की प्रतिबद्धता ने आलोचकों के वर्ग भी बना दिये हैं जो उनको पसंद व ना-पसंद भी करते हैं। झूठा-सच उपन्यास का मूल्यांकन जब हम करते हैं, तो पाते है कि आलोचक यशपाल की कृतियों को एक मापदण्ड से देखते हैं। यशपाल की घोषित प्रतिबद्धता भी आलोचकों को पूर्वग्रह बनाने का अवसर प्रदान करती है।

झूठा-सच में कम्युनिस्ट पार्टी के कुछ प्रसंग आते हैं। कुछ संदर्भों में असद जैसे सदस्य महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पर कुछ स्थान पर वे भाषणबाजी भीअपना लेते हैं या वे बहस करते हैं। इस संदर्भ में बच्चन सिंह का मत है - "दोनों भागों में कम्युनिस्ट पार्टी को तरजीह दी गई है,.... उनका काफी समय बहस करने में गुजर जाता है।"[1] इसी प्रकार का मत दूसरे स्थान पर वे यह देते हैं कि विषय की जटिलता से घबराकर सरलता को स्वीकार कर मार्क्सवादी मत का समर्थन करते हैं वे लिखते हैं - "मार्क्सवाद केन्द्रीय विषय वस्तु मान लेने तथा जीवन और जगत को सीधी रेखा स्वीकार करने का फल यह हुआ है कि उन्हें सत्यान्वेषण में संलग्न होने और किसी

---

1. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास, 374, बच्चन सिंह

जटिल मार्ग से गुजरने की जरूरत नहीं पड़ी ।"[1]

यशपाल की मार्क्सवादी प्रतिबद्धता को रोचक ढंग से अभिव्यक्त करते हैं मदान । वे कथाकार यशपाल को दो भागों में बांटते हैं - मुनि और ऋषि । मुनि का काम विचारना है या मार्क्सवाद की स्थापना करना है । मुनि ऋषि पर हावी रहता है इसलिए कथाकार को सृजन का समय का समय कम मिला है । मदान लिखते हैं - "इनका चिंतन इनके सृजन पर हावी होने की गवाही देता रहा है । इनका मुनि कभी-कभी जब सो जाता है तो इनके ऋषि को सृजन करने का अवसर मिल जाता है ।"[2]

साम्यवादी पार्टी का प्रचार-प्रसार का आरोप यशपाल पर लगता रहा है । इस सम्बन्ध में यशपाल का अपना मत है - "बंदर को बंदर, हाथी को हाथी और गधे को गधा कहना प्रचार है या नहीं ? बन्दर के लिए यह कहना कि वह चंचल है, धूर्त है, हाथी के लिए कहना कि वह भारी और विशाल है और गधे को बेसमझ कहना प्रचार है या नहीं ? कुछ लोग इसे प्रचार कहेंगे परंतु यदि वास्तविक बात न कही जाये तो क्या बंदर, हाथी और गधे का वास्तविक परिचय या वर्णन हो सकेगा ? जिन लोगों को कहानी लेखक लिखता है उनके विचारों और व्यवहार का वर्णन

---

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास, 678-79, सं. नगेन्द्र
2. आधुनिकता और हिन्दी उपन्यास, 59, इन्द्रनाथ मदान

उनका वास्तविक परिचय है, प्रचार नहीं ।"[1]

यशपाल के मत से सहमत नहीं हुआ जा सकता, क्योंकि उनकी कुछ कृतियों को छोड़कर अधिकांश कृतियों में कम्युनिस्ट पार्टी का प्रचार लगता है । उदाहरण के लिए "देशद्रोही" को लिया जा सकता है । जिसमें कम्युनिस्ट पार्टी की वकालत की गई है - जो प्रचार जैसा लगता है । उपर्युक्त आलोचकों व उपन्यासकार दोनों के मत अतिशयोक्तिपूर्ण हैं ।

झूठा-सच के सम्बन्ध में आलोचकों के निश्चित ही इस मायने में कुछ पूर्वग्रह रहे हैं । इस संदर्भ में कुंवर नारायण ईमानदारी के साथ अपने पूर्वग्रह स्वीकार करते हुए लिखते हैं - "झूठा-सच को विचारने से पहले लेखक के इस मार्क्सवादी पूर्वग्रह के कारण उसकी कृतियों के प्रति बन गए अपने इस पूर्वग्रह को स्वीकार कर लेना आवश्यक समझता हूँ, क्योंकि झूठा-सच की पहली विशेषता ऐसे पूर्वग्रहों का स्पष्ट खण्डन ही मानी जा सकती है न तो यह उपन्यास सतही है, न मार्क्सवादी दृष्टिकोण का औपन्यासिक प्रचार मात्र ।"[2] ये मार्क्सवाद को पचाने में यशपाल की सफलता को स्वीकार करते हैं । झूठा-सच में मार्क्सवादी विचारों के आग्रह को प्रचार नहीं माना जा सकता है अपितु विषय की मांग या प्रसंगानुकूल कहा जाना उचित होगा । इस संदर्भ में प्रो॰ प्रवीण का मत गौर करने योग्य है - "झूठा-सच यशपाल की पूर्ववर्ती औपन्यासिक परम्परा से भिन्न एक ऐसी

1॰ गीता पार्टी कामरेड - भूमिका, यशपाल

2॰ हिन्दी उपन्यास पहचान और परख, 220, सं॰ इन्द्रनाथ मदान

कलात्मक कृति है जिसमें मार्क्सवादी सिद्धांतों का आग्रह, गांधीवाद की चीरफाड़, राजनीतिक सिद्धान्तों की सिद्धि और नग्न यथार्थवादी प्रवृति का प्राधान्य है । यदि कहीं राजनीतिक सिद्धान्तों और पार्टियों की चर्चा है तो वह प्रसंगानुकूल है ।"[1] कम्युनिस्ट विचारधारा के अतिरिक्त यशपाल का अपना व्यक्तित्व एवं स्वतन्त्र चिंतन भी रहा है । इस बात को स्पष्ट शब्दों में सुनील कुमार लवटे लिखते हैं - "यशपाल मार्क्सवादी दर्शन के उपासक थे, पर मार्क्सवाद के गुलाम नहीं । मार्क्सवाद उनके लिए पत्थर की लकीर सिद्ध नहीं हुआ । देश की मिट्टी और उसके प्रश्नों से जुड़े होने के कारण उन्होंने एक ओर दर्शन के जरिए उन विचारों की सीमाओं को तोड़ने का प्रयास किया है ।"[2]

उपन्यास झूठा-सच के संदर्भ में मार्क्सवाद प्रसंगानुकूल है न कि पार्टी कामरेड, दादा कामरेड और देशद्रोही जैसे विचार प्रधान उपन्यासों की तरह है । इस उपन्यास में मार्क्सवादी प्रतिबद्धता जैसा न कहे अपितु कांग्रेस पार्टी की जैसी भूमिका रही है लगभग वैसा ही कम्युनिस्टों का प्रसंग है । यदि थोड़ा झुकाव है तो वह लेखक पर मार्क्सवादी दर्शन के चलते माना जा सकता है ।

यशपाल पर दूसरा आरोप लगाया जाता है - कम्युनिस्ट पार्टी के अलावा अन्य पार्टियों जैसे कांग्रेस की सीमाओं व कमजोरियों को स्पष्ट करना तथा गांधी व गांधीवाद का मजाक उड़ाना आदि । गांधीवाद के

---

1. यशपाल का औपन्यासिक शिल्प - 175, प्रो. प्रवीण नायक
2. यशपाल एक समग्र मूल्यांकन, 375, सुनील कुमार लवटे

सम्बन्ध में यशपाल की स्पष्ट राय है - गांधी जी का सत्याग्रह व धर्म को राजनीति में मिलाना या अहिंसा का विचार आध्यात्मिक है। गांधी का मत सामंती व पूंजीवादी शोषण व्यवस्था का समर्थक है। यह सिद्धांत समाज की प्रगति में बाधक है। वे "गांधीवाद की शव परीक्षा" में गांधी अवधारणा को मृत सिद्ध करते हैं। यशपाल ने लिखा है - "गांधीवादी परलोक के लोभ या आध्यात्म के नाम से जिस विचारधारा या शाश्वत सत्य अहिंसा का आदेश देता है, इसका प्रयोजन वर्तमान सामंतवादी और पूंजीवादी आर्थिक व्यवस्था की पैदावार के साधनों पर व्यक्तिगत अधिकार की प्रणाली की रक्षा करना ही है।"[1]

झूठा-सच के द्वितीय भाग के सन्दर्भ में गांधी जी की खिल्ली या मजाक नासमझी व अपरिपक्वता का कारण मानते हुए लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय लिखते हैं - "न तो उसमें वैचारिक परिपक्वता है और न ही कोई सुनिश्चित तार्किक आधार सिवाय इसके कि यशपाल अपने साम्यवादी विश्वासों के कारण विवश थे।"[2] लगभग यही आरोप जो गांधीवाद की शव परीक्षा पर अधिक खरा उतरता है। नेमिचंद जैन लिखते हैं - "जगह-जगह आवश्यक अनावश्यक रूप में गांधी और गांधी के सिद्धांतों की खिल्ली उड़ाई गई है।"[3]

---

1. यशपाल का औपन्यासिक शिल्प, 29, प्रो. प्रवीण नायक
2. हिन्दी उपन्यास : उपलब्धि, 88, लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय
3. अधूरे साक्षात्कार, 75, नेमिचंद जैन

गांधी सम्बन्धी विवाद में यशपाल यदि नहीं पड़े होते तो उनका साहित्य निश्चय ही अधिक ऊँचाई पर होता । फिर भी यदि हम झूठा-सच के संदर्भ में गौर करें तो वैसा खिलवाड़ नहीं पायेंगे जैसा आलोचक बताते हैं । उपन्यास में ऐसी परिस्थिति बनती हैं कि पाकिस्तान को पावना दिया जाना भारत के आम नागरिक व सरकार में बैठे अधिकांश लोग गांधी के उदारवादी व लचीले व्यवहार से सहमत नहीं हो पाते हैं । ऐसे में विभाजन के समय धर्म के नाम पर पाक से भगाये व्यक्ति पावने की नीति पर गांधी का विरोध करें तो परिस्थिति व प्रसंगानुसार लगता है, न कि गांधी की नीतियों का खिलवाड़ होता है ।

देश विभाजन ने न केवल लोगों को अपनी जन्मभूमि से उखाड़ा था, अपितु सदियों पुरानी सामाजिक मान्यताएं, परम्पराएं व जीवन मूल्यों को छिन्न-भिन्न कर दिया था । रातों-रात पड़ोसी के मनों में दरार पड़ गई थी । विभाजन की त्रासदी ने समूची पीढ़ी के जीवन को किस तरह से अस्त-व्यस्त कर दिया था, इस संन्दर्भ में प्रकाश चन्द्र मिश्र ने लिखा है - "सामाजिक यथार्थ के इस चित्रण में लेखक ने अपनी गहरी सूझ-बूझ और निष्ठा का परिचय दिया है । मनुष्यता को विभाजित करने वाली, मानवीय मूल्यों को नष्ट करने वाली जन विरोध प्रतिक्रियावादी, पैशाचिक और स्वार्थी शक्तियों को लेखक ने सही रूप में पहचाना और उन्हें नंगा किया है ।"[1] सामाजिक

---

1. यशपाल का कथा साहित्य, 92, प्रकाश चन्द्र मिश्र

पक्ष पर विशेष बल देते हुए तथा विभाजन के विस्फोटक क्षण को ऐतिहासिक दृष्टि से पकड़ने की दाद देते हुए नेमिचंद जैन लिखते हैं "विभाजन जैसी सर्वग्राही घटना को उन्होंने उसकी आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और वैयक्तिक समग्रता में, साथ ही उसकी गतिमानता में देखने का प्रयास किया है।"[1]

सम्पूर्ण उपन्यास के सन्दर्भ में मानी जाने वाली कमजोरी ही विभाजन के सन्दर्भ में भी अखरती है। गहराई का अभाव। ऐसा कुछ पाठक को नहीं लग पाता है जो उसे गहराई से बोध करा सके, जैसा कि कुंवरनारायण लिखते हैं - "पंजाब विभाजन के बवण्डर में पड़कर जो लोग दिल्ली की ओर आये उनके साथ ऐसी कोई विशिष्ट सांस्कृतिक या धार्मिक या नैतिक परम्परा नहीं आयी, जिसका विनाश या सताया जाना पाठक के मन पर किसी अमूल्य और मार्मिक क्षति का बोध करा सके।"[2] ऐसा न होने के पीछे यशपाल की दृष्टि को मानना पड़ता है - जो लूट-पाट, मारकाट और स्त्री पर होने वाले बलात्कार व अत्याचार पर ज्यादा टिकती है।

देश विभाजन के पीछे आखिर वह मूल कारण क्या था ? जिसके चलते यह अनहोनी टाली नहीं जा सकी थी। साम्राज्यवादी कूटनीति को स्पष्ट करते हुए प्रकाश चन्द मिश्र लिखते हैं - "कूटनीति में दक्ष साम्राज्यवादी शासक तथा उनके द्वारा पोषित सम्प्रदायवादी और स्वार्थी हिन्दू-मुसलमान

---

1. अधूरे साक्षात्कार, 71, नेमिचंद जैन
2. हिन्दी उपन्यास : पहचान और परख, 222, सं. इन्द्रनाथ मदान

नेता हैं, जिनके लिए देश का विभाजन ही उनके अपने स्वार्थ साधना का एक उपाय था ।"[1] ये साम्प्रदायिकता के पोषक कर्ता थे । सवाल यह है कि साम्प्रदायिकता की जड़ें क्या थी ? जिसके चलते विभाजन जैसी विस्फोटक विभीषिका सामने आयी । झूठा-सच में डा॰ प्राणनाथ तारा को होटल की रात वाले प्रसंग से बताते हैं । उसी बात का यशपाल झूठा-सच का संस्मरण लिखते हुए व्यक्त करते हैं - "ब्रिटिश कूटनीति ने जिन साम्प्रदायिक भावनाओं और संस्कारों को लेकर साम्प्रदायिक विरोध को तिल का ताड़ बना दिया, वह तो इस देश के सम्मिलित समाज में सदियों से पले आ रहे थे । मैं बचपन से उन्हें देखता आ रहा था । कभी-कभी उनसे जूझने का भी प्रयत्न किया था । आखिर धर्म के नाम पर जमें संस्कारों को, जिनका प्रयोजन मनुष्य की पशुता को मानवता में बदलना था, उन्हीं संस्कारों को भड़का कर मनुष्य को खूंखार दरिन्दे बना दिया गया ।"[2]

लोग किस तरह से धीरे-धीरे साम्प्रदायिक होने लगे, किस तरह से आम लोग अपनी सोच को संस्कारों में बदलता महसूस करते हैं इस संदर्भ में आनन्द प्रकाश लिखते हैं - "उपन्यास के पहले खण्ड का अधिकांश हिस्सा लोगों की दिमागी जड़ता की ओर बार-बार पाठक का ध्यान खींचता है । लाहौर के विशाल निम्न मध्यम वर्ग की मानसिकता का खाका खींचने का यह काम लेखक ने एक मुहल्ले के दैनिक कार्य कलापों पर दृष्टि केन्द्रित करके

1॰ यशपाल का कथा साहित्य, 92-93, प्रकाश चन्द्र मिश्र
2॰ आधुनिक हिन्दी उपन्यास, III, सं॰ भीष्म साहनी

किया है ।"[1] साम्प्रदायिकता का विकसित होकर विभाजन में परिणत होना - एक सचाई है । इस सचाई को जानने के लिए इतिहास सहायक हो सकेगा या नहीं पर यह अवश्य है कि उस क्षण की पीड़ा को महसूस करने के लिए झूठा-सच का अन्य विकल्प नहीं बन सकेगा । इस सन्दर्भ में डा॰ हेमराज निर्मम का दृष्टिकोण उचित लगता है - "हमारी आगामी पीढ़ियों को देश के इतिहास में इस घटना के बारे में पढ़ने पर भले ही विश्वास न हो, पर झूठा-सच को पढ़कर कोई भी इस घटना तथा उसके दूरगामी प्रभावों पर सहज ही विश्वास कर सकेगा ।"[2]

उपन्यास का शीर्षक सार्थक बन पड़ा है । उपन्यास के आरम्भ में यशपाल लिखते हैं -"सच को कल्पना का रंग देकर उसी जन समुदाय को सौंप रहा हूँ, जो सदा झूठ से ठगा जाता रहा ।" यहां प्रश्न उठता है क्या झूठ-सच में बदल सका ? उपन्यास में जहां सच है वह तो सच है ही पर झूठ कल्पना में रंगा जाकर भी क्या सच बन सका ? कल्पना के रंग में रंगा झूठ छिप नहीं सका यह बात कहते हुए लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय ने लिखा है "इसमें जो कुछ हम कल्पना नहीं कर पाते, वही सच है और जिसकी सत्यता हम निरंतर प्रमाणित करते रहते हैं वही झूठ साबित होता है । किसने सोचा था कि शताब्दियों से स्थापित मान्यताएं एवं जीवन पद्धतियां इस प्रकार एक घोषणा मात्र से झूठ साबित हो जाएंगी और सारी मनुष्यता

---

1. आधुनिक हिन्दी उपन्यास, 184, सं॰ नरेन्द्र मोहन
2. हिन्दी उपन्यास के शिखर, 139, डा॰ हेमराज निर्मम

दिशाहारा की भाँति भटकने के लिए विवश हो जाएगी ।"[1] अन्याय और विघटन के समय मनुष्यता और जीवन के प्रति निष्ठा - सच है और अन्याय, विघटन और नृशंसता के काले बादल स्थायी नहीं रह सकते क्योंकि ये सब झूठ है । इस बात को दार्शनिक शैली में अभिव्यक्त करते हैं रमेश कुंतल मेघ - "इस उपन्यास का झूठ है - घटनाएं, जन जीवन को रोकने वाली सामाजिक शक्तियां, तथा सामंती संस्कार । इसका सच है - ऐतिहासिक अनुभव और निश्चयवाद, सामाजिक चेतना की प्रगति तथा विस्तार, मानवीय प्रेम तथा सत्य । इसके सच मनुष्य तथा समाज के शाश्वत मूल्य हैं, जो देश की काल सीमा को भी लांघ जाते हैं ।"[2]

युद्ध और शांति से तुलना करते हुए आलोचकों ने झूठा-सच की पड़ताल की है । झूठा-सच की स्थूलता व पट के विस्तार को देखते हुए 'युद्ध और शांति' को याद करते हैं । विभाजन की राजनैतिक घटना व दैनिक जीवन को निकटता से देखने के कारण कुंवर नारायण इसे 'युद्ध और शांति' की परम्परा में मानते हैं पर उनकी जानी मानी कवित्व दृष्टि का आभाव झूठा-सच को यह सौभाग्य प्राप्त होने में बाधक बन जाता है । किंतु नेमिचंद जैन इसके विस्तार को ही युद्ध और शांति जैसा मानते हैं । वे कमियां दिखाते हुए लिखते हैं "कलात्मक उपलब्धि इसकी इतनी सीमित है कि दोनों कृतियों में कोई तुलना ही नहीं हो सकती । यशपाल

---

1. हिन्दी उपन्यास : उपलब्धियां, 83, लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय
2. (आलोचना 27, 1963 से उद्धृत) यशपाल का कथा साहित्य, पेज 93, प्रकाश चन्द्र मिश्र

की कला की सीमा केवल यही नहीं है कि वह जीवन का एक छोटा, सतही टुकड़ा ही देख पाते हैं, बल्कि उससे भी अधिक इस बात में है कि वह जो कुछ देख पाते हैं वह मानवीय अनुभूति का सार्थकतम अंश नहीं होता ।"[1] झूठा-सच उपन्यास में गहराई की कमी - मानव जीवन की गहराई में उतर कर पड़ताल करने का अभाव यशपाल की सीमा मानी जा सकती है पर फिर भी मदान का मत यशपाल की इस कमी को छिपाने का हल्का सा प्रयास करता है, वे लिखते हैं - " यशपाल का पाठक के हृदय पर तो अगाध विश्वास है, लेकिन इनकी बुद्धि में आस्था नहीं है । इसलिए वह संकेत के बजाय विस्तार से काम लेते हैं और दोहराने से भी कतराते नहीं हैं ।"[2]

झूठा-सच की सीमा, गहराई का अभाव कुछ सीमा तक कृति का प्रथम खण्ड दूर करता है तो साथ ही साथ दूसरा भाग सीमा को बढ़ाता है । दूसरे भाग में स्थूलता है तो प्रथम भाग में सूक्ष्मता व गहराई है । भोला पांधे की गली के निम्न व निम्न मध्य वर्गीय लोगों के आचार विचार व सांस्कृतिक परम्पराओं का अत्यंत सूक्ष्म और मार्मिक वर्णन हुआ है । गली की औरतों का धर्म के प्रति लगाव व धार्मिक संकीर्णता का घनीभूत चित्रण मिलता है । सामाजिक व मानवीय पहलू की गुत्थियों का चित्रण, भोला पांधे की गली को झूठा-सच की अंतर्यात्रा बना देता है । पहले भाग में यशपाल की सूक्ष्म दृष्टि का कमाल है कि पाठक पढ़कर आक्रोशित होता है । लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय लिखते हैं - "पहला भाग पाठकों के मन में आवेश, उग्रता तथा पाशविकता के प्रति स्वयं घृणा उत्पन्न करता

---

1. अधूरे साक्षात्कार, 80, नेमिचंद जैन
2. आधुनिकता और हिन्दी उपन्यास, 61, इन्द्रनाथ मदान

है और यही उसकी सफलता है । इसके विपरीत दूसरे भाग में स्वयं लेखक का आवेश एवं उसकी उग्रता अभिव्यक्त हुई है जो उसे गहराई नहीं प्रदान करती ।"[1] उपन्यास के पहले भाग में यथार्थ का विघटन है और दूसरे में संघटन यह मत देते हुए डा॰ बच्चन सिंह लिखते हैं - "विघटन का दृश्य उपस्थित करने के लिए जिस यथार्थवादी दृष्टि की आवश्यकता होती है वह यशपाल को प्राप्त है । इसलिए प्रथम खण्ड अपेक्षाकृत अधिक प्रामाणिक यथार्थ और मार्मिक बन पड़ा है । संघटन के लिए यथार्थ की अपेक्षा विधायक कल्पना की आवश्यकता होती है । कहना न होगा कि यशपाल में इसकी कमी दिखाई पड़ती है ।"[2] प्रथाम भाग के पंजाब के संबंध में अमृतलाल नागर यशपाल को विश्व विख्यात उपन्यासकार मानते हुए लिखते हैं - "झूठा-सच में पंजाब जीवंत होकर उभरा है । पंजाब की स्पिरिट बोलती है । एक-एक पात्र सजीव और जीवंत है, पाठक को अपने में रमाने की पूर्ण शक्ति रखता है ।"[3]

झूठा-सच में स्त्री चित्रण विशेष तौर से विभाजन की त्रासदी के संबंध में हुआ है । स्त्री को सम्पत्ति की भाँति लूटा व भोगा गया यहाँ तक तो उचित था पर यशपाल अपनी मार्क्सवादी प्रतिबद्धता के चलते स्त्रियों से विशेष हमदर्दी के साथ चित्रण करने लगते हैं । जैसे विभाजन की त्रासदी स्त्री पर अत्याचार बलात्कार और क्रूरता पर आकर ठहर गयी हो । इस संदर्भ

1॰ हिन्दी उपन्यास : उपलब्धियां, 82-83, लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय
2॰ हिन्दी साहित्य का इतिहास, 678, सं॰ डा॰ नगेन्द्र
3॰ उद्धृत - यशपाल के उपन्यासों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, 391, डा॰ मधु जैन

में नेमिचंद जैन लिखते हैं - "अपने को मार्क्सवादी कहने वाले लेखक के लिए यह सचमुच आश्चर्य की बात है कि स्त्री के ऊपर बलात्कार से बड़ी बर्बरता और मूल्यहीनता की वह कल्पना ही नहीं कर पाता ।"[1] यशपाल का विशेष आग्रह ही स्त्रियों के प्रति करूपा का संचार करता है । स्त्रियों पर चारों ओर से हमले होते हैं, जैसे यह सब करूणा पैदा करने के लिए किया जा रहा हो । सुभाष चन्द्र यादव का मत है - "यशपाल निरपवाद रूप से स्त्रियों को शोषित और पीड़ित दिखाते हैं और फिर उनके लिए एक न्यायोचित मानवीय विकल्प पेश करते हैं ।"[2] स्त्रियों का एक जैसा वर्णन एक से अधिक बार होने पर पाठक को अखरने लगता है । इस सम्बन्ध में मधुरेश का कथन है - "बंती, अमरो, सतवंत और दुर्गा आदि की अलग कहानियां व्यर्थ ही आकार बढ़ाती हैं । उन सारी कहानियों का प्रयोजन भी मानवता का स्खलन, अमानुषिकता और बलात्कार की कहानी कहना है, लेकिन उसे तो लेखक सारे उपन्यास में ही इतने विस्तार से कह आया है ।"[3] स्त्रियों के वर्णन में यशपाल का अतिवादी दृष्टिकोण पाठकों को तो अखरता ही है साथ में कृति को अनावश्यक विस्तार भी देता है ।

यथार्थवादिता के फेर में पड़कर यशपाल स्त्रियों के शरीर की बोली लगाते हुए दिखाते ही नहीं अपितु उसका वर्णन भी करने लगते हैं । नग्नता की अतिशयता देख कर प्रकाश चन्द्र गुप्त रिनेशा के चित्रकारों की कला का

---

1. अधूरे साक्षात्कार, 76, नेमिचंद जैन
2. देश विभाजन और हिन्दी उपन्यास, 160, सुभाष चन्द्र यादव
3. उद्धृत, यशपाल का कथा साहित्य, 95, प्रकाश चन्द्र मिश्र

स्मरण दिलाते हुए लिखते हैं - "जिसे नारी के मांस की दुकान कहा गया था । शायद कुछ अधिक संयमित वर्णन इन चित्रों को और भी अधिक सशक्त और मर्म भेदी बना सकते थे ।"[1]

यशपाल का मार्क्सवादी दृष्टिकोण समाज की रूढ़ व गलित परम्पराओं को चुनौती देता है । जिनके बल पर पुरुष स्त्री को धर्म के नाम पर निम्न मानकर शोषण करता रहा है । झूठा-सच की स्त्री पुरुष की सामंती सोच को चुनौती देती है और परिस्थितियों के आगे घुटने टेकने के बजाये जीवट के साथ संघर्ष करती है । अपने आत्म सम्मान और आत्म निर्णय को बनाये रखती हैं । सामंती मनोवृत्ति से मुक्ति की सराहना करते हुए रामविलास शर्मा लिखते हैं - "प्राचीन सामंती बंधनों से मुक्ति पाना कितना कठिन है, नारी किस वीरता से इनके प्रति विद्रोह करती है, स्वयं उसके संस्कार किस तरह उसकी मुक्ति में बाधक होते हैं, इन सब का मार्मिक वर्णन उपन्यास में हुआ है ।"[2]

स्त्री वर्णन में अतिवादी रवैया अपनाने के कारण कथाक्रम में विस्तार हुआ है तथा कृति कमजोर हुई है, पर स्त्री पुरुष की सामंती मनोवृत्ति से लड़ने व संघर्ष करने में विश्वास रखती है, जिससे उसके आत्म-सम्मान व आत्म निर्णय की प्राप्ति हुई है ।

---

1. उद्धृत, यशपाल का कथा साहित्य, 95, प्रकाश चन्द्र मिश्र
2. कथा विवेचना और गद्य शिल्प, 76, रामविलास शर्मा

झूठा-सच पर विस्तार, बिखराव और स्थूलता का आरोप उपन्यास की कमजोरी की तरफ इशारा करते हैं । इन सब कारणों की एक सीमा मानते हुए रामस्वरूप चतुर्वेदी अपना मत देते हैं - "इतने बड़े उपन्यास में व्यापक कष्ट और पीड़ा को झेलते हुए कहीं कोई चरित्र थोड़ी देर के लिए कुछ सोचता हुआ, आत्मलोचन करता हुआ अंकित नहीं किया गया है । इतिहास वर्णन में तो ऐसा संभव है जहां किसी चरित्र को सोचता हुआ नहीं दिखाया जा सकता पर उपन्यास के लिए सहज नहीं है ।"[1] निश्चय ही इस तत्व की उपन्यास में कुछ कमी है । उपन्यास में वे प्रसंग जो सकारात्मक हैं, सुकुमार हैं वहां पर यशपाल कुछ कम जमते हैं । इस ओर इशारा करते हुए नेमिचन्द जैन लिखते हैं - "केवल वही पात्र कुछ-कुछ जीवंत होते हैं जो या तो कटुता को सहन करते हैं या कटुता को जन्म देते हैं ..... पर जो पात्र जीवन की रचना में योग देते हैं, जिनके व्यक्तित्व में निर्माण की प्रतिभा है या जिनमें सुकुमारता भावनाशीलता या सम्वेदनशीलता अधिक है । ..... उनका अंकन सहानुभूतिहीन, उखड़ा हुआ और यांत्रिक हो जाता है ।"[2] नकारात्मक या कटुता के प्रसंगों में अधिक सफलता मिलने से उस समय की कटुता का अंकन हुआ है, यह उपन्यास की सफलता है ।

उपन्यास की सीमा और कमजोरियों से गुजरने के बाद हम उपन्यास के महत्व से मुंह नहीं मोड़ सकते हैं । जिन कमजोरियों की ओर आलोचकों ने

---

1. हिन्दी साहित्य और सम्वेदना का विकास, 252, रामस्वरूप चतुर्वेदी
2. अधूरे साक्षात्कार, 80-81, नेमिचंद जैन

हमारा बार-बार ध्यान खींचा है, उनकी पड़ताल करते हुए नरेन्द्र मोहन लिखते हैं - "यह विभाजन का मात्र तथ्यपरक, घटनात्मक आकलन नहीं है, बल्कि घटनाओं और तथ्यों के चित्रण के मूल में सामाजिक संबंधों और स्थितियों वर्गों और सम्प्रदायों और उनसे निष्पन्न साम्प्रदायिक विभीषिका जैसी क्रूर स्थिति का पहली बार इतने विशाल पैमाने पर ऐतिहासिक - परिपार्श्व में, चित्रण हुआ है ।"[1] उमर नेमिचंद जैन यशपाल को नकारात्मक मूल्यों के कथाकार कहते हैं, इसे रामविलास शर्मा शक्ति मानते हुए लिखते हैं - "झूठा-सच वह जनता को देश की प्रतिक्रियावादी शक्तियों का वास्तविक घृणित रूप दिखलाता है ।"[2]

सभी आलोचक एक मत होकर झूठा-सच के विशाल-फलक व विस्तार की आलोचना करते हैं, पर इसके साथ एक विशेषता है जिसे हम विधायी कल्पना की कमी महसूस करने वाले बच्चन सिंह के शब्दों में देख सकते हैं - "वे विशाल फलक पर जीवन के विविध रूपों, आयामों, समस्याओं और जटिलताओं को अपने ढंग से प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं ।"[3]

झूठा-सच में एक समय विशेष के भारत का दर्शन होता है साथ में इतने बड़े स्तर पर पात्रों का संयोजन करना और कथावस्तु को सहेजे

---

1. आधुनिक हिन्दी उपन्यास - भूमिका, 7, सं. नरेन्द्र मोहन
2. कथा विवेचना और गद्य शिल्प, 75, रामविलास शर्मा
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास, 678, नगेन्द्र

रखना भी एक कला है । यह मत है प्रकाश चन्द्र गुप्त का पै,लिखते हैं - "असंख्य पात्रों का स्वाभाविक विकास, धीरज के साथ और सक्षम होकर कथावस्तु का आगे बढ़ना, एक ही स्थान पर ये बातें अन्यत्र दुर्लभ हैं ।"[1] यशपाल की व्यंग्य करने की क्षमता और कला कम बेजोड़ नहीं है साथ में कहानी कला भी उनकी अपनी है जो विशाल फलक होने पर भी रोचकता में कमी नहीं होने देती । इस संदर्भ में नेमिचंद जैन का मत है - कहानी गढ़ने और कहने की सामर्थ्य, एक विशेष प्रकार की रोचकता और उसकी चसक, विषमता और पाखण्ड के ऊपर चुभते हुए तीखे पैने व्यंग्य, राजनीतिक आन्दोलनों को सामाजिक यथार्थ के अन्य पक्षों के साथ समेटते चलने के कौशल आदि से एक नये रूप में साक्षात्कार होता है ।"[2]

झूठा-सच के महत्व को स्वीकार ने वाले न केवल देश में हैं अपितु इसके महत्व को विदेशी आलोचक भी स्वीकार करते हैं । सोवियत में मिखाइल शोलोखोव के उपन्यास क्वाइट फ्लोज द डान या अलेक्सी तोलस्तोय के रोड टू केलवरी से तुलना करते हुए ई· येलिशेव लिखते हैं - "झूठा-सच आधुनिक भारत के इतिहास के महत्वपूर्ण दशकों में से एक भारतीय बुद्धि-जीवियों के भाग्य एवं भारत के भविष्य के विचारों की एक यथार्थ तथा मार्मिक गाथा है ।"[3]

1· उद्धृत, यशपाल का कथा साहित्य, 91, प्रकाश चन्द्र मिश्र

2· अधूरे साक्षात्कार, 72, नेमिचंद जैन

3· उद्धृत, यशपाल के पत्र, 123, मधुरेश

झूठा-सच उपन्यास की कमजोरियों और सीमाओं के बावजूद हम कह सकते हैं कि भोला पांधे की गली जीवन मूल्यों व संस्कृति का विघटन है, जहां से लोग अपनी जड़ों से उखड़ते हैं । यह उखड़ने और जमने के बीच के अंतराल को मनुष्यता के ह्रास और हमेशा से "सच" साबित होने वाले आपसी रिश्तों के झूठ में परिवर्तित होने की जीवन यात्रा है । किंतु जमने के बाद (देश का भविष्य में) राजनीतिक पार्टियों व सरकारी भ्रष्टाचार तथा अपनी मार्क्सवादी पक्षधरता के चलते राजनीतिक अखाड़े का विस्तार सा लगने लगता है ।

झूठा-सच उपन्यास पढ़ते समय पाठक को कहीं भी नहीं लगता है कि भाषा दुर्बोध है या जटिल है । भाषा शैली की विशेषता बताते हुए लिखतेहैंकुंवरनारायण - "उपन्यास के सन्दर्भ में यशपाल की भाषा का यह गुण श्लाघ्य है कि वह कहीं भी थकाती नहीं ।"[1] यशपाल की आम लोगों की भाषा के संबंध में हेमराज निर्मम का मत है - "वे मध्य वर्गीय समाज की सामान्य बोल-चाल की भाषा के प्रयोग के पक्ष में हैं । इसलिए उनकी भाषा कहीं भी दुर्बोध नहीं होती ।"[2] क्रांति में विश्वास रखने वाले यशपाल को जब महसूस हुआ कि अब बुलेट से अधिक बुलेटिन कारगर हो सकती है तो उन्होंने साहित्य रचना आरम्भ की । मध्य वर्ग को सचेत

---

1. हिन्दी उपन्यास पहचान और परख, 224, सं. मदान
2. हिन्दी उपन्यास के शिखर, 138, हेमराज निर्मम

व जागरूक करने के लिए आवश्यक था, कि पांडित्यपूर्ण भाषा के स्थान पर सरल, स्पष्ट व सुलझी हुई आम लोगों की भाषा हो और यह यशपाल के स्वभाव के अनुरूप था । इस सन्दर्भ में झूठा-सच खरा उतरता है ।

- x -

उपसंहार

उपसंहार

विभाजन ने देश की समूची व्यवस्था को झकझोर दिया था । इतनी बड़ी सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक त्रासदी से साहित्य जैसी सम्वेदनशील विधा का अछूता रहना संभव नहीं था । भारतीय साहित्य में विभाजन विषय को लेकर कुछ कृतियां लिखी गयीं हैं । विभाजन के मर्म को स्पर्श करने वाली रचनाएं उर्दू साहित्य में मानी जाती हैं जो अधिक कलात्मक ऊंचाई तक पहुंचने में सफल रही है । हिन्दी साहित्य में आधा दर्जन उपन्यास विभाजन से संबंधित हैं । ये विषय को अलग-अलग ढंग से छूते हैं । झूठा-सच विभाजन पर विशेष रूप से केन्द्रित विशाल फलक वाला उपन्यास है ।

झूठा-सच के मूल्यांकन में हमने पहले अध्याय में पृष्ठभूमि के तहत दो बातों पर विशेष तौर से ध्यान दिया है । पहली बात है - साम्प्रदायिकता का उद्भव और विकास तथा किस तरह से साम्प्रदायिकता विभाजन के लिए पृष्ठभूमि बनती है । दूसरी है - विभाजन के साम्राज्यवादी शक्ति व नेताओं की महत्वाकांक्षा किस प्रकार से विभाजन के द्वार खोल देती है ।

साम्प्रदायिकता विषय हमेशा से विवाद का विषय रहा है । इसके उद्भव को लेकर भी विद्वान एकमत नहीं हैं । फिर भी हम मानकर चलते हैं कि साम्प्रदायिकता अपने भयावह रूप में उपनिवेशवाद के समय आती है । बेशक स्वतंत्रता आन्दोलन के समय से अपना भयावह रूप दिखाने वाला यह

शब्द सम्वेदनशील धर्म से जुड़ा हुआ है । धर्म के जुड़ने से हमें इसके उद्भव के लिए इतिहास में झांकना पड़ता है ।

प्राचीन हिन्दू धर्म की महत्वपूर्ण विशेषता रही है सहिष्णुता । इसकी कोख में विषमता भी साथ-साथ चलती है । प्राचीन धर्म ग्रंथ मनुस्मृति में वर्ण व्यवस्था की नीव रख दी गई थी । जिसके तहत हमारे समाज का ढांचा मोटे रूप में चार भागों में बांट दिया गया था । इस व्यवस्था का अंतिम भाग कहलाया शूद्र । जो धर्मानुसार न केवल अमरी वर्ण की सेवा के लिए था, अपितु निम्न व अछूत रहने के लिए अभिशप्त था । जिसे किसी भी प्रकार का न्याय पाने का अधिकार नहीं था । हिन्दू समाज की इस भेदभावपूर्ण नीतियों को चुनौती तब मिली जब पहली बार इस्लाम का आगमन सातवीं व आठवी सदी में हुआ ।

इस्लाम का आधारभूत ढांचा भ्रातत्वभाव व समता की नींव पर खड़ा हुआ है । किंतु इस्लाम की धार्मिक कट्टरता के कारण मुसलमान अन्य धर्म वालों को निम्न मानते हैं । उनकी धारणा है कि दूसरे धर्म वाले इस्लाम स्वीकार करके उनमें मिलकर समानता प्राप्त कर सकते हैं । वे अपनी ठोस धार्मिक, सांस्कृतिक परम्पराओं के साथ भारत में प्रवेश करते हैं । जहां पर पहले से ही वर्ण का बंटवारा हो चुका है । ऐसे में मुसलमानों के स्थान का निर्धारण करना धर्माचार्यों के लिए एक बड़ी समस्या हो जाती है । वर्ण व्यवस्था के तहत मुसलमानों के लिए शूद्र या मलेच्छ या अछूत का स्थान हो सकता है । पर यह निम्न व घटिया नाम मुसलमानों को कभी स्वीकार

नहीं हुआ । पर साथ रहते-रहते दोनों धर्मों का एक दूसरे में कुछ सम्मिश्रण होता है ।

मुसलमान जो अपनी समता का दम भरते थे, वे दोनों संस्कृतियों के मेल से हिन्दुओं की जाति वाले कोढ़ के शिकार हो जाते हैं । उनमें भी जाति वाला भेदभाव धीरे-धीरे बल पकड़ता है पर समता के चलते वे एक दिखते रहे । फलत: हिन्दुओं द्वारा उनको मलेच्छ व अछूत कहना तथा मुसलमानों द्वारा हिन्दुओं को काफिर कहना, दोनों वर्गों में विभेद व अलगाव को जिंदा रखते हैं । मध्यकाल में आकर हिन्दू मुसलमान मोलाओं द्वारा अपमानित होते हैं । जिससे अलगाव बना रहता है । पर मेल मिलाप के चलते यह समाज के लिए खतरा नहीं बन पाया ।

दोनों धर्मों में चला आने वाला मेल मिलाप भारत के उपनिवेश बनने के साथ समाप्त होने लगता है । अंग्रेज भेदभाव व अलगाव की नीति के चलते अपने साम्राज्यवादी इरादों को कार्य रूप देते हैं । ऐसे में महत्वाकांक्षी नेता अंग्रेजों की कूटनीति व साम्राज्यवादी दाँव पेच में फंसकर साम्प्रदायिकता से लड़ने में असमर्थ सिद्ध होते हैं । फलत: साम्प्रदायिकता विभाजन के रूप में सामने आती है ।

द्वितीय अध्याय झूठा-सच के मूल्यांकन से संबंधित है । कथा का आरम्भ केन्द्र भोला पांधे की गली है । गली भाईचारे व आपसी रिश्ते की मिसाल लगती है, पर साम्प्रदायिकता का जहर उस बस्ती में सुरक्षा

के नाम पर हिन्दू रक्षा समिति वाली औरते कलकत्ते की घटना का वर्णन करके विषवमन करती है । इसके बाद सब्जी वालों से सब्जी खरीदना बंद कर दिया जाता है । उनमें अपनेपन का भाव मुसलमानों को गैर व दुश्मन में परिवर्तित कर देता है । यही कार्य दूसरी तरफ हाफिज जी जैसे मुल्ला धर्म विस्तार के नाम पर करते हैं । वे गैर मुसलमानों को काफिर समझते हैं तथा हिन्दू धर्म को निम्न, पिछड़ा व पुरातनपंथी कहते हैं । उनका मानना है कि हिन्दू औरतों को हिन्दू धर्म में जीने का कोई हम नहीं है, पर वे अपनी औरतों की परतन्त्रता को स्वीकार नहीं कर पाते हैं । वे काफिरों को मुसलमान बनाकर खुदा के नेक काम में रात दिन लगे रहते हैं । उन्हें उम्मीद है कि उनकी मेहनत व प्यार तारा को भी मुसलमान बना देगा ।

अपने-अपने धर्म को श्रेष्ठ मानने वाले अंग्रेजों की नीतियों में आकर, दंगे-फसाद व बलवे करने में लिप्त हो जाते हैं । साम्प्रदायिकता का दावानल विभाजन के रूप में परिणित होता है, उसके पीछे झूठा-सच में यशपाल ने डा॰ प्राणनाथ के शब्दों में जो बताया है वह है सदियों पुराना हिन्दुओं का सामाजिक ढांचा जिसमें भेदभाव मूलतत्व होता है । जो मुसलमानों को मलेच्छ कहकर अलगाव को जन्म देते हैं ।

यशपाल ने यहां पर हिन्दुओं को पूरी तरह से दोषी करार दिया है, जबकि मुसलमान भी हिन्दुओं को काफिर कहकर अपने से निम्न समझकर उनके मन में अलगाव को जन्म दिया है । इस प्रकार से हम देख सकते हैं कि

अलगाव दोनों तरफ से होता है न कि हिन्दुओं की तरफ से ।

उपन्यास में स्त्री पात्रों को परिस्थितियों की मार व विभाजन की त्रासदी से शिकार होते हुए दिखाया है, तो साथ में पुरूष की सामंती सोच के आगे झुकने के बजाय टक्कर लेते हुए व संघर्ष करते हुए दिखाया है ।

राजनीति के दांव-पेच, सरकार में भ्रष्टाचार व नेताओं की औरतों के प्रति सामंती सोच का पर्दाफास उपन्यास में जमकर हुआ है ।

तृतीय अध्याय में आलोचकों की दृष्टि में झूठा-सच को देखने व पड़ताल करने की कोशिश की है । यशपाल की प्रतिबद्धता आलोचना के केन्द्र में रही है । इस सन्दर्भ में आलोचकों के अपने पूर्वग्रह रहे हैं । जिसके चलते वे झूठा-सच को उनकी पूर्ववर्ती उन कृतियों की श्रेणी में रख देते हैं, जो कम्युनिस्ट पार्टी का प्रचार व प्रसार लगती हैं । पर हम यह भी स्वीकार करते हैं कि झूठा-सच में राजनीति के सन्दर्भ में अनावश्यक विस्तार से वर्णन हुआ है ।

स्त्री वर्णन में यशपाल का मार्क्सवादी रवैया दिखाई देता है । स्त्री के प्रति उनकी हमदर्दी विचारधारा के चलते है, जिससे वे स्त्रियों का विस्तार से वर्णन करते हैं, उन पर अत्याचार का व बलात्कार का वर्णन होता है । यहां तक ही नहीं उनकी नग्नता का वर्णन करने से भी वे नहीं चूक पाते है । जिससे स्त्री के सन्दर्भ में कमजोरी झलकती है । पर एक दृष्टि से उपलब्धि भी है । वे स्त्री को पुरूष की मध्यकालीन

पारम्परिक सामंती सोच से मुक्त करके, आत्मसम्मान व आत्मनिर्भरता से युक्त दिखाकर रूढ़ परम्परा को चुनौती देते हैं ।

उपन्यास के विशाल फलक, विस्तार व स्थूलता तथा गहराई का अभाव या पात्रों में गहराई से चिंतन करने जैसी मर्म को छूने वाली बात न आ सकी । राजनीति के लम्बे प्रसंग उपन्यास को कमजोर बनाते हैं यों कहें कि सीमा निर्धारित करते हैं ।

विशाल स्तर पर पात्रों का संयोजन, कहानी गढ़ने की कला, तीखे-पैने व्यंग्य करने की शक्ति तथा पहले भाग में आई गहराई सूक्ष्मता तथा पाठकों में पाशविकता के प्रति घृणा पैदा करने की कला के लिए हमें झूठा-सच का महत्व स्वीकार करना पड़ता है । विशेषकर विभाजन जैसी त्रासदी पर संयम के साथ महागाथा लिखने के लिए जिसमें मानवता के साथ खिलवाड़ करने वाली साम्प्रदायिकता को तिल का ताड़ बनाकर मनुष्यता को बांट दिया गया है ।

- x -

संदर्भ ग्रंथ सूची

संदर्भ ग्रंथ सूची

आधार ग्रंथ

1. यशपाल, झूठा-सच, प्रथम खण्ड, नवम संस्करण, 1972
2. यशपाल, झूठा-सच, द्वितीय खण्ड, चतुर्थ संस्करण, 1977, विप्लव कार्यालय लखनऊ, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

सहायक पुस्तक सूची

3. अबुल कलाम आजाद, आजादी की कहानी, 1965, (अनुवादक महेन्द्र चतुर्वेदी) ओरिएंटल लौंग मैंस, बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, नई दिल्ली
4. इन्द्रनाथ मदान, आधुनिकता और हिन्दी उपन्यास, 1980, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
5. इन्द्रनाथ मदान, हिन्दी उपन्यास : पहचान और परख, लिपि प्रकाशन, कृष्णा नगर, दिल्ली
6. कांति मोहन, प्रेमचंद और अछूत समस्या, 1982, जन सुलभ साहित्य, दिल्ली
7. कांलिंस और लैंपियर, आधी रात को आजादी, 1976, (अनुवादक मनहर चौहान), अहमदाबाद गाइडप्रकाशन
8. ग्रोवर बी.एल. और यशपाल, आधुनिक भारत का इतिहास : एक नवीन मूल्यांकन, 1982, एस. चन्द एण्ड कम्पनी लि. राम नगर न.दिल्ली
9. जवाहरलाल नेहरू, हिन्दुस्तान की कहानी, 1990, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली

10. जवाहरलाल नेहरू, मेरी कहानी, 1971, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली

11. डा. नगेन्द्र सं., हिन्दी साहित्य का इतिहास 1985, नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली

12. नरेन्द्र मोहन,सं., आधुनिक हिन्दी उपन्यास

13. नागोरी एस.एल., भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन, 1988, आर.बी. एस. पब्लिशर्स जयपुर

14. नेमिचंद जैन, अधूरे साक्षात्कार, 1989, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

15. प्रकाश चन्द्र मिश्र, यशपाल का कथा साहित्य, 1978, दि मैकमिलन कम्पनीआफ इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली, बंबई, मद्रास, कलकत्ता

16. प्रभा दीक्षित, साम्प्रदायिकता का ऐतिहासिक संदर्भ, दि मैकमिलन कम्पनीआफ इण्डिया लिमिटेड, नई दिल्ली

17. प्रो. प्रवीण नायक, यशपाल का औपन्यासिक शिल्प, 1963, सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा

18. बच्चन सिंह, आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास, 1986, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

19. प्रो. बिपिन चन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

20. भीष्म साहनी सं., आधुनिक हिन्दी उपन्यास, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

21. मधुरेश, यशपाल के पत्र, 1977, दि मैकमिलन कम्पनी, दिल्ली

22. मधुलिमये, स्वतन्त्रता आन्दोलन की विचारधारा, 1983, पल्लव प्रकाशन क्यू-22, शाहदरा दिल्ली

23. यशपाल, गीता-पार्टी कामरेड, 1984, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

24. रजनी पाम दत्त, भारत वर्तमान और भावी, 1982, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली

25. रामगोपाल, भारतीय मुसलमानों का राजनीतिक इतिहास, मीनाक्षी प्रकाशन, बेगम ब्रिज मेरठ, 1977

26. राम मनोहर लोहिया, भारत विभाजन के अपराधी, 1970, राम मनोहर लोहिया समता विद्यालय, प्रकाशन, हैदराबाद

27. राम विलास शर्मा, भारत में अंग्रेजी राज और मार्क्सवाद-1, 1982, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

28. रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिन्दी साहित्य और सम्वेदना का विकास, 1986, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

29. लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय, हिन्दी उपन्यास : उपलब्धियां, 1970, राधा कृष्ण प्रकाशन, दिल्ली

30. डा. सीताराम झा श्याम, भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम की रूपरेखा, 1981, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना

31. डा. सुनील कुमार लवटे, यशपाल एक समग्र मूल्यांकन, 1984, पराग प्रकाशन शाहदरा, दिल्ली

32. सुभाष चन्द्र यादव, देश विभाजन और हिन्दी उपन्यास (शोध प्रबंध 1981) जे.एन.यू., नई दिल्ली

33. सुमित सरकार, आधुनिक भारत, 1992, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

34. शुक्ल आर.एल., आधुनिक भारत का इतिहास, 1990, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

35. डा. हेमराज निर्मम, हिन्दी उपन्यास के शिखर, 1981, मंथन पब्लिकेशंस, रोहतक

- x -

समाप्त